वर्धमान पुस्तक माला का पुष्प नं ५

प्रजन कंवर श्याम कंवर
की
लावणी

प्रकाशकः-
देवचन्द डागा
नया बास, ब्यावर.
(राजपूताना)

चिम्मनसिंह लोढा के प्रबन्ध से
श्री जैन गुरुकुल प्रेस ब्यावर में मुद्रित

प्रति १००० } वीर सम्वत् २४६२ / विक्रम सम्वत् १९९२ { मूल्य -)॥

मोटो । महाराज ॥ जिन्हों से करी सगाईजी ॥ ते आया परणवा काज जुगत से जान बणाईजी ॥ मैं किया बहुत भगनी का हरक बँधावा । महाराज ॥ देखो जीने कपट कमायाजी ॥ जाने भोग ॥३॥ मिल भुवा भतीजी गुपतपणे गोविंद को । महाराज ॥ बाग में लिया बुलाईजी ॥ भट पूजा के मिस जाय आप हरी संग सिधाईजी ॥ कर गई फजीतो दुर्जन लोग हँसाया । महाराज ॥ वंस में छाप लगा ईजी । केई सूरवीर सिरदार जिनों की बात गमाईजी ॥ मेरे भावे तो मर गई बहन रुकमणी । महाराज ॥ भूप केहे रोस भरायाजी ॥ जाने भोग ॥४॥ मुझ इष्ट कन्थ वलभ वेदरबी कुंवरी । महाराज ॥ इमने दूं परनाईजी । पण भूल चूक में कभी न दूं जादव कुल मांहिजी ॥ यूं कही दूत ने तुरत विदा कर दीनो । महाराज ॥ द्वारकां नगरी आयाजी । रुकमणी पूछे धर प्रेम दूत सब हाल सुनाया जी ॥ या सुणी पीयर की बात हरी पटराणी । महा-राज ॥ केई मनसोबा ठायाजी ॥ जानें भोग ॥५॥ या बात सुणया बीन किम रहे भामा-राणी । महाराज ॥ कुंवर जादवकी नारीजी । जो जाणे गातो ये बात हांसी करु गिरिधारीजी ॥ यों बेठि करत बिचार महेलके माह ॥ माहाराज ॥ कुंवर इतने चल आयाजी । बे हाथ जोड़ प्रेम मातको सीस नमायाजी ॥ क्यों सोचकरो मुज मा

बात फुरमावो । महाराज ॥ करूं सबही मन चायाजी ॥ जाने भोग ॥ ६ ॥ तब मात रुकमणी कही हकीकतसारी । महा० कुंवर यूं कह्‌ मैं जाऊंजी ॥ जोहे मामा को बचन वोही मे पार लगाऊंजी ॥ हे मुझ मामाकी वोही वेदरबी कुवेंरी ॥महाराज॥ परण कर निज घर आऊंजी ॥ सुन मात आपके लाय बींद-णी पात्र लगाऊं जी ॥ युं बीनो करीने मन का सोच मिटा या। । महाराज ॥ कुवर अब करे चडायाजी ॥ जाने भोग ॥ ७ ॥ एक श्याम कुंवर श्री जामवती का जाया ॥ महाराज ॥ जिन्हों से राहा मिलाईजी ॥ पण हे आ-पस माही प्रेम कहुं क्या प्रीत मनाईजी ॥ यों सल्ला करके जुगल वीरकी जोडी । महाराज ॥ तुरत कुन्दण पुर आयाजी ॥ विद्या के जोर से आप ड्रमका रूप बनायाजी ॥ केई घोडा ऊंट और साथे पाडा छारी ॥ महाराज ॥ बाग में डेरा लगायाजी ॥ जाने भोग ॥ ८ ॥ तब दोनों भाई उठे आप मद रात ॥ महाराज ॥ बन्शी और वेणा बजावेजी । छः राग और छत्तीस राग णी मिलकर गावेजी ॥ सुण राग केही जंगल का जीव लुभाया । महाराज ॥ राग पसरयो पुर माहींजी । बहु राजा दिक नरनार, सुणो एक धुन्य लगाईजी ॥ परभात भयो जब मुख २ शब्द उचारे । महाराज ॥ राग में खूब रीझायाजी ॥ जाने भोग ॥ ९ ॥ ये चारों दिशामें फिरता राग अलापे ।

महाराज ॥ कोंन थे ऐसो गावेजी । वनमांय ढूंडता फिरे लोग पण पतो न पावेजी ॥ इम करतां एक दिन कुन्दणपुर में आया ॥ महाराज ॥ फिरे संग लोग लुगाईजी ॥ या सुणी बात महीपाल डूंम को लिया बुलाईजी ॥ तिहां बैठा जाजम डाल नृप के आगे। महाराज ॥ मनुष्य नहीं जाय गीनायाजी॥ जाने भोग ॥ १० ॥ वो वेदरवी कुंवरी पिण देखण न आई ॥ महाराज ॥ तात लेगोद बिठाइजी ॥ हरीनन्द देखकर रूप मगन हो गये मन माहीजी ॥ तव प्रजन कुंवरजी तान मिला कर गावे । महाराज ॥ रागमें राग चलावेजी ॥ एक समझे कंवरी सुणो लोग पण भेद न पावेजी ॥

॥ राग पनिहारी ॥

प्रजन कुंवर कहे तान में सुन कुंवरीए सुन कुंवरीए ॥ में नहीं छांढोलि- डूम कुंवरीए ॥ १ ॥ देवपुरी सम द्वारी कां सुन कुंवरीए, सुन कुँवरीये । तिहां राज पाले हरीराय ॥ कुं० ॥ २ ॥ माता रुकमणी मायरी सुन० सुन० ॥ मु तेनो छु अंग जात । कुं० ॥ ३ ॥ जो मन होवे तांहरो सुन० सुन० ॥ तो मुझ वंछो भरतार । कुं० ॥ ४ ॥ तुम हम जोडी सारखि सुन० सुन० ॥ तु यो अवसर मत चूके ।कुं० ॥ ५ ॥ डाला डोली मन क्यों करे ॥ सुन० सुन० तू मन को भर्म मिटाय । कुं ॥ ६ ॥ थारे कारण डूंम में बणाया

सुन. सुन. लियो छे कष्ट उठाय ॥ कुंवरो॥ विद्या से आपको रूप लियो पलटाई। महाराज। देख कुंवरी मनभाया जी ॥ जाने भोग ॥११॥ जितने आलम वहां राज सभा में आये। महाराज ॥ सबी को डूम दिखावेजी ॥ पण सागे राजकुंवार नजर कुंवरी के आवेजी। तन मन से गाय बजाय लियो बिसरामो। महाराज ॥ डूम से पूछे रायाजी। तुम कोण देश में बसो कहो तुम कहां से आयाजी ॥ ये सोरठ नामां देश द्वारका नगरी महाराज ॥ वहां से हम चल आयाजी ॥ जाने भोग ॥१२॥ तब राय रुक्मीया कहे डूम थे मांगो। महाराज सोही थाने मिल जावेजी ॥ यूं कहे कुंवर धन माल हमारे कुछ नहीं चावेजी ॥ हम दोई जणां हाथा से करा रसोई। महागज ॥ हमे या कुंवरी दीजेजी ॥ तो खटपट सब मिट जाय आप इतनो जस लीजेजी ॥ या बात सुणीं नृपती रोस मे आयो। महाराज ॥ धक्का देई बहार कडाया जी ॥ जाने भोग ॥१३॥ महेला मे सूती कुंवरी आप अकेली। महाराज ॥ सजी सिणगार सनायाजी ॥ पण है या रात की वात हुए अब मन का चायाजी ॥ विद्या के जोर से कुंवर तिहां चल आया। महाराज बींद को भेष बनाईजी कुंवरी को पकड कर हाथ नींद से तुरत जगाईजी ॥ हथलेवो जोड कर बिधी व्याव की सारी ॥महाराज॥ कंवर फेरा फिर आया जी ॥ जाने भोग ॥१४ ॥ कंवरी के पास दिन ऊगां दासी

आई । महाराज ॥ मन में अचरज पाईजी देख्यो परणो तुवेश राय ने आण जणाईजी ॥ सुण बात दौड़ राजा राणी मिल आया महाराज सूंन कंवरीकर लीनीजी । हे वंसलजावण हार थें भी चोखी गत कीनी जी । तुम कारण दुष्टन वचन डूम ने हारयो । महाराज वहन से वैर वसायाजी ॥ जाने भोग ॥ १५ ॥ कर रीस दूत ने भेजो बाग के माही । महाराज डूम न लिया बुलाईजी भट पुत्री दीनी सौंप नहीं साची मन मांहीजी । तव कंवरी को लेई डूम बाग में आया । महाराज मोहणी पाछी जागी जी । मैं दीनी डूमने सौंप बात आछी नहीं लागीजी । पाछी कंवरी ने लाऊं बाग में हेरे । महाराज डूम का पता न पायाजी ॥ जाने भोग ॥ १६ ॥ बैठो गम खाय भूप बात न भूल्यो । महाराज ॥ कंवर तब फौज बणाई जी ॥ लसकर को किया पड़ाव राय ने आय जणाईजी ॥ सुण मांमांजी में अजन कंवर चढ़ आया । महाराज ॥ मुझे कवरी परणावोजी ॥ जो करो जुद्धतो आवो सामने जोर जणावोजी ॥ याबात सुणी नृपति मन पछतावे । महाराज ॥ करूं में कोन उपाईजी ॥ जाने भोग ॥ १७ ॥ जो जुद्धकरूं तो वैर बसे गो दुणो । ॥ महाराज ॥ जोर जादवको पूरोजी । हे कोन अधिक वलवान इनो से सूर वीरोजी ॥ में अजन कंवर से जाय करूं नरमाई । महाराज ॥ बात जदरहे हमारी जी । इस करके

खूब विचार आय, झट हुआ तयारीजी ॥ तव मामोजी ने कंवर आवता देख्या। महाराज ॥ हीये अति हरसे भराया जी ॥ जाने भोग ॥ १८ ॥ मारग मे कियो मिलाप हेत करलीनो। महाराज ॥ तुरत तम्बुमे पेठाजी ॥ मामाजी और भाणेज दोई आसण पर बेठाजी ॥ इतने तो उठ वेदरभी कंवरी आई ॥ महाराज ॥ तात को शीस नमायाजी ॥ मिट गयो सकल जंजाल प्रेम से वटे वधायाजी ॥ फिर करी व्यावकी रीत डायजो दीनो। महाराज ॥ सीख लेई कंवर सीधायाजी ॥ जाने भोग ॥ १९ ॥ श्री प्रजन कवर कर फते द्वारका आया। महाराज ॥ कामणयां कलस वधावेजी ॥ घर २ मे मंगलाचार लोग मुख २ जस गावेजी ॥ निज मात तातने नमे कंवर कर जोडी। महाराज ॥ कीरत पसरी जुगमाहीजी। जो वोही वेदरभी परणा माताके पाव लगाईजी तव माता रुक्मणी मगन हुई मनमाही। महाराज ॥ खुसीका पार न पायाजी ॥ जाने भोग ॥ २० ॥ निजभामण साथे राजकुंवर सुख भोगे। महाराज ॥ करी मोजा मनमानीजी। फिर लीनो संजम भार सुणी जिनवर की वाणीजी ॥ नीत विनो करीने अंग दुवादस ॥ भणीया ॥ महाराज ॥ तपमासून कमाईजी ॥ था राजकुंवर सुखमाल जीनोकीये अधीकाईजी ॥ ते मोलावर्ष को पूरण संजम पाल्यो ॥ महाराज ॥ वास मुक्ती का पायाजी ॥ जानेभोग ॥ २१ ॥ संमत उगणी से साल

कहुं चोसटके॥ महाराज ॥ धनतेरस रवीवाराजी ॥ ये करि जोड़ परमाण ढाल सागर अनुसारेजी॥ एक नीमाहेड़ों शहर दीपतो भारी। महाराज॥ सवी श्रावक सुखदाइजी। हूवो धर्म ध्यान को ठाट खूब चोमासा मांहीजी ॥ श्री नंदलालजी मुनीतणा सिष गावे ॥ महाराज॥ ज्ञान मुझे गुरु बतायाजी॥ जाने भोग छोड़ लिया जोग ॥ २२ ॥ इती

॥ श्री श्यामकुवरकी लावणी-चालद्रोन ॥

ये प्रजन कंवर का श्याम कंवर लघु भाई ॥ महाराज ॥ दोनों की माता न्यारीजी ॥ पण तीन खंडका नाथ तात जिनका गिरधारीजी ॥ टेक ॥ यह जुगल वीर की जोड़ दीपती भारी। महाराज ॥ प्रेम आपस में पूरो जी ॥ चाले कुल की मरयाद घड़ी एक रहने दूराजी ॥ खुश होय एक दिन प्रजन कंवरजी बोले। महाराज॥ भाई तुम शक नहीं राखोजी ॥ जो मन की इच्छा होय वोही मुझे अलग भाखोजी ॥ [illegible]र अरज तात से वोही चीज दिलाऊं। महाराज ॥ मांग[illegible]थ मरजी थारी जी ॥ पण तीन ॥१॥ कहे श्यामभ कुंवर कर जोड़ बात सुन भाई। महाराज॥ और मुझे कुछ नहीं चावेजी ॥ जद वचन दियो परमाण आप फिर नहीं पलटावेजी ॥ [illegible]लोक सरी की येही दुवा-रिका नगरी ॥ महाराज ॥ मन में बहुत उमावो जी

करूं छः महीना तक राज्य तात से आप दिगवांजी।
लीजे इतनो जस आप सफल कर दीजे। महाराज॥ येही
बस अरज हमारी जी ॥ पणतीन॥ २॥ तब प्रजन कंवर
लेई लार श्याम कंवर ने ॥ महाराज॥ सभा मे दोड़ मिल
आयाजी॥ अति हरक सहित कर जोड तात ने सीस नमा-
याजी॥ दीनों आदर हरीराय कुँवर से पूछे। महाराज॥
कहो जो भाव तुम्हाराजी। करूं सफल मनोरथ आज आय
नहीं बचन हमारा जी॥ सुण तात आप से ओर नंद बोल युं
मांगू। महाराज॥ कुंवर युं कहे विचारीजी ड़ हरी से बोले
मैं सोलह बरस मे आय आय से मिली री॥ पणतीन॥१०॥
तक कभी न जांचाजी॥ अब मांगूं सो प। महाराज॥ भराणी
आपकी वाचाजी। ये दुवारामति को श्याम्भ कुंवार हाथ से
महाराज॥ श्याम्भ कुँवर ने दीजेजी॥ शावो तात वात या पूछी
जगत में यो जस लीजे जी॥ सुण ी। जो करे काल की वात
बचन का बंध्या। महाराज॥ तुरत कोप करी हरी देस नीकारो
पणतीन॥४॥ अब श्याम्भ कं टर न टारीजी॥ पण तीन॥११॥
महाराज॥ खूब घन घन कहावेजी। तपे आया। महाराज॥ बहोत
आपकूं बिसन कमावेजी॥ जो नादान हाल कुछ समझेनाई
आवे। महाराज॥ र अपरा आपको कीनों॥ महाराज॥
की कहो क्यो नहीं नावोजी। यो गुनों मुझे बखसाय बचन
सब युं रहा बिच जी॥

॥ रंगत–नागजी ॥

तातजी । अजन कंवर इम विनवेरे कोई ॥ कर जोड़ी पांवा पड़ी । हो तात जी तातजी ॥ १ ॥ राजनपत माहाराज जीरे कोई ॥ विरद विचारो आपको। होतातजी॥२॥ तातजी ॥ पूत कपूत होवेसहीरे कोई ॥ मावीत छ हदेवे नहीं । होतातजी ॥ ३ ॥ तातजी ॥ छेदन भेदन जोकररे कोई ॥ चन्दन गुण छोडे नहीं । होतातजी ॥ ४ ॥ तातजी जंत में पहिले सेलड़ीरे कोई ॥ मिस्ट सवाद मूंक नहीं । हो तातजी ॥५॥ तातजी ॥ सिर ऊपर तिरतो फिरेरे कोई॥ जलती डूबो बेकाड़ ने । होतातजी ॥ ६ ॥

॥ चौक का मिलाप ॥

निज नन्दन की हरी एक बात नहीं मानी । महाराज ॥ तरक इतनीक निकाराजी ।पणतीन ॥ १२ ॥ जो सतभामा जी हे तू मोटी माता । महाराज॥ हस्ती के ऊपर बिठावेजी ।। पण चंवर उड़ाती आप द्वारका मांही लावेजी ॥ तोहे मुझे आज्ञा रहो मोज के मांहीं । महाराज ॥ कंवर सुन पाचो वलियों जी ॥ अति हरक धरी झट आय श्यांभ कंवर से मिलियोजी ॥ मैं सुखदायक उपाय कर आया हूं । महाराज ॥ फिरतो तक्दीर तुमारीजी ॥पणतीन ॥ १३ ॥ कहे श्यांभ

कंवर यूं बन्दव बात विचारो । महाराज ॥ मात देख्यो नहीं आवेजी ॥ तो कर ऐसी तजबीज मुझे कहो किम ले आवेजी । बेताज गौरी विद्याधर उत्तर सेणी । महाराज ॥ मेघ कुट नगर तुम्हारीजी ॥ तिहां दीजे जल्दी मेल खुशी चित्त होय हमारोजी ॥ लीजे जस या ही वक्त निकल जा वेगा । महाराज ॥ आप हो पर उपकारीजी ॥ पण तीन ॥ ॥१४॥ जरा धीरज धर तू क्यों इतनो घबरावे । महाराज॥ जोर विद्या को भारीजी ॥ झट पलट दियो निज रूप करी जिम देव कुंवारीजी । भामांजी का रमणीक बाग के मांहीं । ॥ महाराज ॥ वृक्ष की शीतल छाया जी ॥ तिन हेटे दीनी मेल कपट का वेण सिखायाजी ॥ यूं कर तजबीजी गया द्वारिकां माही । महाराज ॥ बात वो खूब सुधारीजी ॥ ॥ पण तीने ॥ १५ ॥ लेइ सख्यां लार तिण अवसर भामा राणी । महाराज ॥ बाग मे रमवा आईजी ॥ देख्यो कंवर को रूप अती मन अचरज पायोजी । भामाजी बोली कछु भेद नहीं जाण्यो । महाराज ॥ पास कंवरी के आईजी । अति देकर आदर मान बात पूछे हुलसाईजी । थे कुणछो बाई राज वेण प्रकाशो ॥ महाराज ॥ सुरत थारी मोहन-गारीजी ॥ पणतीन ॥ १६ ॥ कहे शाम्ब कुंवर यूँ नेणा जल बरसाई । महाराज ॥ मात सुण बात हमारीजी ॥ अणी मृत्यु लोक के मांय मे हूं एक दुखणी नारी जी ॥ मैं विद्याधर राजा की -वल्लभ- -कुंवरी । महाराज ॥

यहां मामोलेई आयोजी । मैं सुती थी भरनींद दुष्ट मुझे छोड़ सिधायोजी ॥ कहे सतभांमा थू नाई तु मत रोवे । महाराज ॥ ॥ खुली तकदीर तुम्हारीजी ॥ पण तीन ॥ १७ ॥ सुभानुं कुंवर मुझ पुत्र दीपतो भारी । महाराज ॥ कहावे नन्द हरी कोजी ॥ नन्याणुं कंवरयां साथ व्याव अब होसी नीकोजी ॥ जो मन होय तो यो अवसर मत चूके । महाराज ॥ मोंज करजे मन मानींजी ॥ सब कंवराणया के मांय तुझे करसूं पटराणीजी ॥ सुण बात मात परमाण करी में थारी ।महाराज॥ अरज इतनीक हमारीजी ॥ पण तीन ॥ १८ ॥ में भुंचरतो सुपनांमे कदे नहीं वंछु । महाराज ॥ आजकी वक्त बीचारुं जी ॥ मुझे हरक सहीत ले चलोतो मनमें नीश्चे धारुंजी । फिर गज होदे तुम हाथे चंवर ढुरावो । महाराज ॥ हुई खुस भामां राणीजी । झट कर एसी तजबीज तुरत नगरीमें आणी जी ॥ अब बटे वधायां खूब द्वारकां मांही । महाराज ॥ करे महमां नर नारीजी ॥ पण तीन ॥ १९ ॥ अब सतभामां जी ॥ व्याव कुंवरको मांडो । महाराज ॥ दरब खरचे मन चायोजी ॥ घुर रहे वाजीन्तर नाद लगन दिन नेडो आयो जी ॥ युं गुपतपणे कुंवरी ब्राह्मणसे बोले । महाराज ॥ रीत कुलकी नहीं छोडूं जी । में उपर राखूं हाथ जदी हतलेवो जोडूंजी ॥ सुणी भामांजी युं कहे तुरत कंवरीसे । महाराज ॥ रीत होय सो कर थारीजी ॥ पण तीन ॥ २० ॥ तब कंवरी

आपणो हाथ ऊपरे राख्यो । महाराज ॥ फिरे फेरा अवमागे-जी ॥नन्याणुं कुवरां माय आप हुई सब के आगेजी ॥ अति हरक सहित कियो ब्याव मात मन गमतो । महाराज । भवन आयो हुलसाईजी ॥ सुभानुं कुंवरकी नार सवी मिल भीतर आइजी ॥ तब प्रजन कुंवरजी झट विद्या को सुमरी । महा-राज ॥ कियो निज रूप तयारीजी ॥ पण तीन ॥ २१॥ श्री श्याम्भ कुंवरजी देवरूप जिम दीपे ॥महाराज॥ सेज पर बैठा आइजी । सब राणया देखी रूप तुरत मनमें मुरझाई जी । तिण सेजाके चोफेर आयके बैठी । महाराज । खुली जिम केसर क्यारीजी ॥ तीहा श्याम्भ कुंवरको बैठा देख जलदी से ॥महाराज॥ कहे युं सक नीवारीजी ॥ पण तीन ॥ २२॥ हे लाजहीण मुझ महेंलों मे किम आयो । महाराज । तुझे कुमती भेंरमायोजी ॥ तब श्याम्भ कंवर कर नेत्र लाल तिण ने घुरकायाजी ॥ सुभानुं कंवर उठ भाग मात पे आया ॥ महाराज ॥ हकीकत मांड सुणाईजी । सत भामांजी झट दौड तुरत से चलकर आईजी ॥ अती क्रोध करीने कडा वेण गावे ।महाराज। दुष्ट तुं निकल बहारीजी ॥पण तीन॥२३॥ जः देस निकालो तात तुझे दीनों थो । महाराज । काई यो कष्ट कमायोजी । तुंलोप हरी की आण यहां पाछो किम आयोजी ॥ या प्रगट हुया निज बात कहो किम ऐसी ।महा-राज॥ नाथ जिन को गिरधारी जी ॥ जो जासुंगा अब नोल

कोण गत करसी थारीजी ॥ तब श्याम्भ कंवर कर जोड़ मात से बोले ।महाराज। अरज एक सुणो हमारी जी ॥पण तीन॥ ।२४। मैं कियो वचन परमाण आण नहीं लोपी ॥महाराज॥ जोर होय जठें पुकारोजी । मैं हूं निरदोषी आज तात कांई करे हमारोजी । मैं पुडवी सल्ला पट ऊपर बैठोथो ।महाराज। बाग में सीतल छायां जी ॥पण गज होदे बैठाय आप खुद लेकर आयाजी ॥थारो सुण माता उपगार कदी नहीं भूलूं । महाराज । रोस फिर चड़ियो भारीजी ॥ पण तीन ॥ २५ ॥ तब श्यांभ कंवर निजठाम गया निकलके ।महाराज। मौज में रहे सदा ही जी । फिर भामांजी पण तुरत हरी के पासे आईजी ॥ दोई हाथ जोड़ सब बीतक हाल सुनाया ।महाराज। हरीजी युं हस बोल्याजी । तब गज होदे बैठाय चंवर कहो किणनें ढोल्याजी । मैं सांच कहूं राणीजी रोस नहीं कीजे ।महाराज। कुबद याहै सब थारीजी । पण तीन । २६ । सत भामांजी फिर रीसकरी ने बोले ।महाराज। करी फिर भ्रूटी मुजनें जी । थारो पलटयों नहीं सभाव गवाल्या जाणुं तुझने जी । यूं बड़बड़ करती सतभामा गई महेलां ।महाराज। बडी समता दिलधारीजी ॥ यो कपट भरचो संसार अवे रेणो हुसियारीजी ॥ फिर श्याम्भ कंवर पचास अंतेवर परणायां । ।महाराज। सेज सुख वील से भारीजी ॥ पण तीन ॥ २७ ॥ फिर नेम जीनंद नंदकी सुणी आपनें वाणी । महाराज । धर्म को

मरम पिछाणयोजी ॥ झूटो जग संसार सार एक संजम जाणयोजी । आज्ञा लेइनें तुरत भोग छटकाया ।महाराज। सुत्रमे वरणव चाल्योजी । जुं अजन कवर तरे आप सुध संजम पाल्योजी ॥ कर अष्ट करम को अंत सिद्ध पदपाया । महाराज। काज सब लिया सुधारी जी ॥ पण तीन । २८। संमत उगणीसे पेसट चेत शुद्ध माही । महाराज । तिथी एकम गल्यारेजी ॥ ये जुगत बणाई जोड़ ढालसागर अनुसारेजी । मेवाड़ देस गढ चत्रकोट सुखकारी ॥ महाराज ॥ तीन संत वीछरत आया जी ॥ हे सब श्रावक गुणवान मेरा दिल लगे सवायाजी ॥ श्री नंदलालजी मुनी तणा सिष्य गावे । महाराज ॥ गरु मेरा हे उपकारी जी ॥ पण तीन खंमका ॥ २६ ॥ इती श्री लावणी संपुरण ॥

॥ श्री कृष्णजीकी लावनी ॥

॥ चाल दूणकी ॥ ये कृष्ण और बलभद्र हुवा दोई भाई । महाराज ॥ आप जादवकुल-माहींजी । लियो सुजस जगमें खूब फैल रही कीरत सवाईजी ॥ टेक ॥ ये द्वारामती एक नगरी वीर बखाणी । महाराज ॥सुत्रमे वरणव चालेजी ॥ तिहा कृष्ण भोगवे राज सुख पर जानें पालेजी ॥ तिण अवसर वीछरत नेमनाथ सिवगामी । महाराज ॥ द्वारका नगरी आया जी ॥ एक सहसरा बन हे बाग तीहा उतरथा जिन

रायाजी ॥ तब खबर हुई नगरी के लोग हुलसाया । महाराज ॥ परखदा वंदन आईजी ॥ लियो सुजस ॥ १ । श्री कृष्ण भूपती येही बात सुणपाया । महाराज ॥ तुरत सैंना सिणगारीजी ॥ जावे दरशण करवा काज हुवा गजपे असवारी जी ॥ तिहां आय बाग में नेमजीनंदजीने भेटयां । महाराज ॥ प्रेम धर शीस नमायाजी ॥ तिहां सेवा करे करजोड़ भूप मन घणां ऊमायाजी ॥ तब नेमनाथ भगवान देस नां दीनीं । महाराज ॥ सुणो सब चित लगाईजी ॥ लिया सुजस ॥ २ ॥ तब बंदणा करके गई परखदा सारी । महाराज ॥ कृष्ण फिर अरज गुजारीजी ॥ कहो द्वारामती को हाल प्रभुजी तुम जाणों सारीजी ॥ श्री नेमनाथ भगवान भेद समझाया । महाराज ।। सुत्र में साख वखाणीजी ॥ नही कियो यहां बिस्तार लावणी वधती जाणी जी ॥ तब कृष्ण भूप कर जोड़ बंदना कीनी । महाराज ॥ गया निज नगरी माहीं जी ॥ लियो सुजस ॥ ३ ॥ तीहां आय सभा में राज सिहासण बैटा । महाराज ॥ द्वारका नगरी मांही जी ॥ उठ तुरत फुरत पर धान भेज सब बात जणाईजी ॥ जो भवी जीव संसार कारमों जाणीं । महाराज ॥ प्रभू पें संजम लेवेजी ॥ ताको तीन खंड को नाथ हरक से आज्ञा देवेजी ॥ जो हलू करमी हो मोह नींद से जागे । महाराज ॥ पडों तो दियो बजाईजी ॥ लियो सुजस ॥ ४ ॥ रुकमणी आप

नी प्रेमवती पटराणी । महाराज ॥ वली कंवरराया चेती जी । केई राजा राजकंवार सुधारी नर भव खेतीजी ॥ यू धरम दलाली करी हरी तनमन से । महाराज ॥ सफल नर-भव करलीनी । होसी दुवा दमसा जीने राज सुत्र मे नीरखो कीनोजी । श्री नंदलाल जी महाराज तणा शीष गावे । महाराज जोड चितोड बणाइजी ॥ लियो सुजस ॥ ५ ॥ इति श्री ॥-

॥ लावणी कृष्ण की ॥

॥ चाल—रावण को समझावे राणी ॥

पुरशोतम प्रगट्या अवतारी । जगत में महिमा विस्तारी ॥ टेक ॥ देवकीको नन्द नहे नीको ॥ हूवो जादवकुल मे टीको ॥ भादवा विदी अष्टमी को । जन्म जद भयो हरीजीको ॥ दोहा ॥ तिण अवसर वसुदेवजी । मनको सोच मिटाय ॥ कोमल करमे लेई लाल कूं ॥ जावे गोकुल माय । तुरत फुरती से हुआ तय्यारी ॥ तु० ॥ पु० ॥ १ ॥ भवन से आया उतर हेटा ॥ द्वारके ताल्ला चढ्यासेटा ॥ कमको पहरो बाहर बैठा । निकलजाने का नहीं रस्ता ॥ दोहा ॥ चरण अंगुष्ट लगावियो ॥ गोविन्दको तिणवार ॥ खड खड ताला टूट पड्याकाई ॥ सडडड खुलिया किवाड ॥ अखण्डित निकल गये विहारी ॥ अ० ॥ पु० ॥ २ ॥ अन्धेरी रात घटा छाई ॥ जोर से गाजे गगन माहीं ॥ चमकती बिजल्या

दरसाई ॥ वाइरो वाजे सव्वाई ॥ दोहा ॥ अति उमंग आश स ॥ पड़रही जलकी धार ॥ शेष नाग छाया कर दीनी पड़ नवूंद अगार ॥ जिनों के पुन्य वड़ा भारी ॥ जी ॥ पु० ॥ ३ ॥ निकल मथुरा से गोकल ध्यावे अपट जमना जी पुर जावे ॥ निकलवा मारग न पावे ॥ विवद मिसलत मन में ठावे ॥ दोहा ॥ पगफरस्यो गोपाल को ॥ जमना हुई दो भाग ॥ वशुदेवजी तुरत निकल गये ॥ हुलस्यो अथाग ॥ गोकल में पहुंचे गिर धारी ॥ गो० ॥ पु० ॥ ४ ॥ यशोदा के हाथ जाई दीना ॥ प्रेम से गिरधर को लीना ॥ नन्दजी मोहत्सव कीनो ॥ दान बहु यांचकने दीनों ॥ दोहा ॥ आया मथुरा निज घरे ॥ वशुदेव जी चाल ॥ दिन २ बीज कला ज्यूं वंधता ॥ आनंद में नंदलाल ॥ कोई नहीं जाने गिरधारी कों ॥ को० ॥ पु० ॥ ५ ॥ कृष्ण भया मोटा हाथ में डंडा लिया छोटा ॥ ग्वाल संग रमे दड़ी डोटा सत्रु के हुवां जमे सोटा ॥ दोहा ॥ सोला वर्ष गोकुल विसें लीला करी अनेक ॥ तीन खंड का नाथ हुवा नू पूरन पून तो देख ॥ जगत वलव कहे नरनारी ॥ ज० ॥ पु० ॥ ६ ॥ दलाल्या धर्म तणी कीनी । सास्त्र में साख देख लीनी ॥ सज्जन पुरुष दुष्टी कीनी । भलायां जग में वहु लीनी ॥ दोहा ॥ महा मुनी नंदलालजी ॥ तस्य सीस्य कहे राम । पुण्य प्रताप वंछित फलपाये) रखो धर्म कौनाम । मांड लड़ जोड़

करी नयारी ॥ मा० ॥ पुरुषोत्तम प्रगटयां अवतारी ॥ ७ सम्पूर्ण—

पद माताजी का

धीरा चालो हो बृज का वासी । ये देसी । माता देवकी जी नवर भेटी ॥ सब मनकी भ्रमना मेटी ॥ घर आया सिंहासन पर बैठीरी ॥ बोलो बोलो माजी मन खोली । सब बातहि या में तोलीरे २ माजी मन खोलीरें ॥ १॥ तब हरी श्रृंगार बनाया ॥ माजी का दर्शन पाया ॥ चरणो मे शीश नमाया रे ॥ बोलो बोलो ।२॥ कर जोड़ी ने गीरधर भाके । माजी किम आख्र नाके ॥ करू सफल कहो दिल थाकेरे ॥ बोलो बोलो ॥३॥ माजी सब वृतान्त सुनाया ॥ तब बचन दियो हरी राया । सब मनका सोच मिटायारे । बोलो बोलो ॥४॥ पोखद शाला मे आई ॥ सुर समरयो ध्यान लगाई ॥ थारे होसी बालो लघु भाईरे । बोलो बोलो ॥ ५ ॥ दिन उगया पोखद पाल्यो ॥ माता को कारज सारयो हुवो गज सुख माल कुवारोरे ॥बोलो बोलो ॥६॥ नदलाल मुनी गुन-धारी ॥ तस शिष्य कहें हितकारी । नित पुन्यती जेजेकारीरे । बोलो बोलो माजी मन खोलीरे ॥७॥ सम्पूर्ण ॥

पद गज सुख मालजी को

मेवा डोजी हुकम करो तो हाजर ऊभी । ये देसी । होजी नेमजी

नंद भगवान की । काही अगीयां लेई रुखी राय मुनी वरजी ॥ तरु हेटेजी इस मसाणमें । कांही ऊभा ध्यान लगायो ।मुनिवरजी साधपणों सुद्ध आदरयो।१। होजी सोमल ब्रामन तिनसमें कांहीं जातो नगरी मझार । मुनिवर जी । तिन वाटे थई निसरयां कई ओलख्या अनगार । मुनीवरजी । साधपणो ।२। होजी लघु भाई गोविन्द का । महारी वेटी में कांई वतायो दोस । मुनिवरजी । विन अपराधे पर हरी । कई अधिक भरानो रोस । मुनिवरजी । सा-धपणों ।३। होजी आली मांटी लायो । सरतणी कांहीं बांधी मुनि के पार । मुनिवरजी । दुष्ट दया आनी नहीं । कांही सिर धर्या खेर अंगार ॥ मुनिवरजी ॥ साधपनों ॥ ४ ॥ होजी मुनिवर मंदिर गिरि समों ॥ कांही नहीं करयो क्रोध अगार । मुनि-वरजी । ध्यान थकी चूका नही । कांही चढियो अणामा की धार ॥ मुनिवरजी ॥ साधपणों ॥ ५ ॥ होजी चार करम दूरा हुवा ॥ कांही पाम्या केवल ज्ञान ॥ मुनिवरजी ॥ आठूंही करम खपायनें ॥ कांही पहुंचा मुनि वण्व स्थान । मुनिवर जी ॥ साधपणों ॥ ६ ॥ होजी श्री ॥ मुनीका गुन गावता ॥ कांही वरते सुख भरपूर । मुनिवरजी ॥ खूब चंद कहेंने स नाम सू ॥ काही कारज सिद्ध जरूर ॥ मुनिवरजी ॥ साधपणों सुद्ध आदरयो ॥ ७ ॥ समंपूर्ण ॥

अवश्य पढ़िये

जवाहिर गुण रत्नमाला..

रचयिता -

श्रीयुत कुंवर शोभालालजी महता

उदयपुर निवासी।

प्रकाशक -

श्रीयुत कुंवर घीसूलालजी डागा, ब्यावर.

रामस्वरूप मिश्र के प्रबंध से

मनोहर प्रिंटिंग वर्क्स, पीपलिया बाजार ब्यावर में मुद्रित।

संवत् १९९२ वि०

[illegible]मवार

[illegible]०००.

अमूल्य भेट.

॥ श्री वीतरा गायनम. ॥

जवाहिर गुण रत्नमाला

पुज्य वेग ही सुध लो हमारी, हम आये हैं शरण तिहारी ॥टेर॥
तुमही हो जग के आधारा, तुम बिन कोई नहीं है सहारा।
महिमा खूब जगत में भारी, हम आये हैं शरण तिहारी ॥ १ ॥
जग कहता दयानिधे मारा, इस कारण तुमही को पुकारा।
जाऊं छोड चरण कहां तुम्हारी, हम आये हैं शरण तिहारी ॥ २ ॥
महिमा नाथ तुम्हारी अपारा, चारों तीर्थन पावे पारा।
कैसे गाऊं मे महिमा तुम्हारी, हम आये हैं शरण तिहारी ॥ ३ ॥
विनती तुमसे है बारम्बारा, तुम बिन कौन सुनेगा पुकारा।
नैया बीच पड़ी मझधारी, हम आये हैं शरण तिहारी ॥ ४ ॥
नदिया बहती है अगम अपारा, तुम बिन कौन है नाथ हमारा।
कर दो किश्ती को जल्द ही पारी, हम आये हैं शरण तिहारी ॥ ५ ॥
नाथ जिनने तुमको ध्याया, उनकी नैया को पार लगाया।
अब मोही भी लेउ उबारी, हम आये हैं शरण तिहारी ॥ ६ ॥
नाथ मेरो तुही रखवारो, अब बांह पकड कर तारो।
दास उग्र सिंह है आनन्द भारी, हम आये हैं शरण तिहारी ॥ ७ ॥

॥ लावणी नं० २ ॥

पूज्य जवाहिरलालजी गुणधारी, जाऊं क्रोड़ २ बलिहारी ॥टेर॥
मालवा देश सुखकारी, जहा थादला शहर गुल्जारी।

पिता जीवराज हितकारी, जाऊं क्रोड़ २ बलिहारी ॥ १ ॥
तुम नाथी बाई के जाये, धन्य ऐसे सुत तुम पाये जी ।
पूज्य धन धन तुम महतारी, जाऊं क्रोड़ २ बलिहारी ॥ २ ॥
आप शीतल चन्द्र समाना, नहीं जावे तेज बखाना जी ।
क्या सूरत मोहनगारी, जाऊं क्रोड़ २ बलिहारी ॥ ३ ॥
जब आप कपासन आये, चारों तीर्थ मिल सुख पाये जी ।
पूज्य अजब छटा है तुम्हारी, जाऊं क्रोड़ २ बलिहारी ॥ ४ ॥
साहित्य के पूरे ज्ञाता, विद्वानों के मन भाता जी ।
पूज्य राज परम उपगारी, जाऊं क्रोड़ २ बलिहारी ॥ ५ ॥
पूज्य हमरे पूरे ज्ञानी, हैं वो ज्ञान रत्न के दानी जी ।
पूज्य महिमा अपरम्पारी, जाऊं क्रोड़ २ बलिहारी ॥ ६ ॥
उदयापुर वेग पधारो, मत तोड़ जो पूज्य मन म्हारो जी ।
पूज्य इच्छा पूरो हमारी, जाऊं क्रोड़ २ बलिहारी ॥ ७ ॥
मैं उदयापुर से आया, पूज्य का दर्शन कर सुख पाया जी ।
"शोभा" खूब बढ़े पूज्य तुम्हारी, जाऊं क्रोड़ २ बलिहारी ॥ ८ ॥

॥ चाल-जैन धर्म का डंका आलम में बजवा दिया वीर जिनेश्वर ने ॥
॥ लावणी नं० २ ॥

धन भाग्य हमारे उदय आज, दर्शन हुए पूज्य जवाहिर के ॥टेर॥
मन बार २ हर्षाय रह्यो, दर्शन कर पूज्य जवाहिर के
धन्य ग्राम नगरपुर पाटण जहां, धर्माचारज ऐसे विचरें ।
जिनराज नहीं जिन सम दर्शन, होगये हैं पूज्य जवाहिर के ॥ १ ॥

मनमोहिनी मूरत अजब छटा, दिखला रही है पूज्य की सब को।
फिर क्यों नहीं हो आनन्द हमें, दर्शन कर पूज्य जवाहिर के ॥२॥
पूज्य वाणी सरस अनूठी है, पूज्य जैनागम के है ज्ञाता।
नयन हुय सफल हुए हैं आज, दर्शन कर पूज्य जवाहिर के ॥३॥
लग रही तमन्ना दिल में मेरे, एक बहुत बडी ही मुद्दत से।
खूब सफल हुई आश मेरी, दर्शन कर पूज्य जवाहिर के ॥४॥
न्याय नीति सब चित्त धरें, पूज्य नाम से सब ही काज सरे।
सब ही नर नारी हर्ष धरें, दर्शन कर पूज्य जवाहिर के ॥ ५ ॥
धन्यवाद कपासन श्रीसंघ को ऐसे पूज्य को यहाँ पधराये।
लाभ लिया हजारों जनता ने, दर्शन कर पूज्य जवाहिर के ॥ ६ ॥
खातिरदारी करते हैं खूब, आये गये (हुवे) महमानों की।
श्रीसंघ कपासन के खातिर, दर्शन हुए पूज्य जवाहिर के ॥ ७ ॥

गजल कव्वाली (नं० ४)

(युवराज पदवी के अवसर पर गाया हुआ भजन)

घडी धन आज की सब को, मुबारिक हो मुबारिक हो।
हुई युवराज पदवी आज, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥ टेर ॥ घडी
नाम शुभ है गणेशीलाल, जो है नाम गुण सम्पन्न।
बने श्री संघ के रक्षक, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥ १ ॥ घडी
सेवा पूज्य राज की करके, किया है ज्ञान का अभ्यास।
क्षमा सन्तोष गुण इनके मुबारिक हो मुबारिक हो ॥ २ ॥ घडी
आपकी योग्यता पर ही, किये युवराज पन्चों ने।
सभी का यहां अमल होना, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥ ३ ॥ घडी
पूज्य श्रीलाल ने दीनी थी, चद्दर पूज्य जवाहिर का।
पाट का खूब दिपाना, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥ ४ ॥ घडी
बढेगा खूब गौरव अब, जवाहिर के अनुग्रह से।
आदर पूज्य का देना मुबारिक हो मुबारिक हो ॥ ५ ॥ घडी

खूब जय और विजय होवे, कीर्ती खूब हो जग में ।
दिनों दिन खूब बढे "शोभा" मुबारक हो मुबारिक हो ॥ ६ ॥ घडी

लावणी (नं० ५)

तर्ज़—(ऋषभजी मू डे बोल)

पूज्यजी प्यारा रे, पूज्यजी प्यारा रे ।
श्री जवाहिरजी मोहन गारा रे ॥ टेर ॥
थांदला शहर गुलजार एक, तिहां ओस वंश सुखकारी रे ।
पिता आपके जीवराजजी, बहु गुण धारी रे ॥ १ ॥
घणो शील सतोष पूज्य के, गुण रत्नो भण्डारो रे ।
जिन मारग ने खूब दिया, करते उपगारो रे । २ ॥
इनकी महिमा है जग जाहिर, कौन इन्हें नहीं जाने रे ।
ज्ञान ध्यान संजम में सूरा, दुनिया माने रे ॥ ३ ॥
देके ज्ञान जन साधारण को, मुग्ध सदा ही करते हैं ।
आवे अगर कोई वादी बन कर, मान को हरते हैं ॥ ४ ॥
क्षमा आपकी भारी पूज्य, या बात जगत में जोरी है ।
पाखण्डियों को दूर हटाते, महिमा भारी है ॥ ५ ॥
वैराग्य भाव से रहे पुज्यजी, सब को ही हितकारी है ॥
ज्ञान ध्यान में रहे मगन, आतम उजबारी है ॥ ६ ॥
सम्वत् उगणीसे साल एकाणू, उदयापुर के मांही रे ।
आसोज सुदि सातम दिन, "शोभा" जोड़ बणाई रे ॥ ७ ॥

स्तवन-देशी झांच (नं ६)

धन भाग हमारे पुज्य पधारे, जवाहरलालजी ॥ टेर ॥
पिता आपका जीवराजजी, नाथी बाई मात ।
ओस वंश में ऊपना सरे, धन जननी धन तात ॥ १ ॥ धन

क्षमा तणा भण्डार पुज्यजी, गुण रत्नों की खान ।
महाव्रतधारी पर उपगारी, जाणे सकल जहान ॥ १ ॥ धन
अमृत जैसी मधुरी वाणी, सुन कर सब हर्षावे ।
पूज्य के दर्शन करने से, आतम उज्ज्वल होजावे ॥ ३ ॥ धन
बहु ओर फैली है महिमा, पुज्य सम दूजो नाहीं ।
हीरा सम पुज्यराज मिले, फिर पत्थर पकडो काही ॥ ४ ॥ धन
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य मुस्लिम, कोई भी आजावे ।
निरख निरख पूज्य की सूरत ने, हर्षित सब हो जावे ॥ ५ ॥ धन
सम्बत उगणीसे साल इकाणु, आसोज शुक्ला मांय ।
सातम सोमवार उदयापुर, शोभालाल गुण गाय ॥ ६ ॥ धन

स्तवन देसी- मजा देते हैं क्या यार (नं० ७)

पुज्य श्री जवाहिरलालजी महाराज, मोक्ष की राह बताने वाले ॥टेर॥
पिता जीवराज ओसवाल, माता नाथाजी के लाल ।
सब से तोड मोह का जाल, द्वादश तप ग तपने वाले ॥ १ ॥ टेर
आप ने उदयापुर में आन, कीना चौमासा है जान ।
दीना भव्य जनों को ज्ञान, धर्म का मर्म बताने वाले ॥ २ ॥ टेर
वाणी वर्षे अमृत धार, पुज्य है गुण रत्ना भण्डार ।
वन्दना करता बारम्बार, शिव मारग दर्शाने वाले ॥ ३ ॥ टेर
पूज्य ताजे पद पर सोहे, सब जीवों के मन मोहे ।
धर्म का बीज मन बोवे प्रतिपाल कहाने वाले ॥ ४ ॥ टेर
अलौकिक है पुज्य का उपदेश, होता राग द्वेश नहीं लेश ।
सुन कर मिटजाता सब कलेश, क्षमा के बीज सुनाने वाले ॥ ५ ॥टेर
महिमा जग में बहु भारी, पुज्य का दर्शन है सुखकारी ।
"शोभा" होता हर्षित भारी, भवसागर से तिराने वाले ॥ ६ ॥ टेर

नं० ८.

तर्ज — छोटी मोटी सूइयां ए जाली का मोरा काढना ।

धन्य हमारे भाग्य, पूज्य का यहां पधारना ।

लग रही थी दिल में तमन्ना, दिल में तमन्ना ।
बहुत बड़ी पूज्यराज सफल हुई भावना ॥ १ ॥ धन्य
ज्वाहिर जाहिर जो जन वन्दे, जो जन वन्दे ।
मनवांछित फल पाय, होवे सफल सब कामना ॥ २ ॥ धन्य
जैन धर्म के ज्ञाता हैं पूरे ज्ञाता हैं पूरे ।
होगा विरला कोय, ऐसे तो मुश्किल पावना ॥ ३ ॥ धन्य
सबही जीवों को वल्लभ लागे, हां वल्लभ लागे ।
शीतल चन्द्र समान, पुज्य जवाहिर सुहावना ॥ ४ ॥ धन्य
शहर कपासन से आप पधारे हां आप पधारे ।
उदयापुर के मांय, दर्शन कर सब हर्षावना ॥ ५ ॥ धन्य
जिन मारग को खूब दिपाया, हां खूब दिपाया ।
तिरण तारण की जहाज, ऐसे पुज्य को नित ध्यावना ॥ ६ ॥ धन्य
चरण कमल पड़तां ही घर में, हां पड़ता ही घर में ।
होवे आनन्द अपार, कैसी रसना से गावना ॥ ७ ॥ धन्य

गजल नं० ९

पूज्य जवाहिरलाल, तेरी महिमा अपरम्पार है ।
जो करे सत्संग पूज्य का, उसका बेड़ा पार है ॥ टेर ॥
पूर्व पुण्योदय हमारा, पूज्य के भेटें चरण ।
जिन धर्म के हैं ये प्रचारक, प्रेम के भण्डार हैं ॥ १ ॥

अपने चरित अरु ज्ञान से, मरु भूमि को पावन किया।
है अलौकिक बुद्धि इनकी, जिसका न पारावार है ॥ २ ॥
आप जैसे पूज्य पाये, फिर कमी रहती है क्या ?
है यही निश्चय हमें, पुज्य राज तारणहार है ॥ ३ ॥
शक्ति नहि जिव्हा में मेरी, गा सकू गुण आपके।
देखकर आनन्द होता, ऐसा ही दीदार है ॥ ४ ॥
महिमा अमित पूज्य राज की है, कौन वर्णन कर सके।
मीठी वाणी आपकी है, जैसे अमृत धार है ॥ ५ ॥
कल्पवृक्ष सम ओपमा दी जाती है पूज्य राज को।
पड़ते चरण जारे ही घर में वरते मगलाचार है ॥ ६ ॥
सदा जय अब होय पूज्य की, विनती है जिनराज से।
लाल "शोभा" जाता है बलिहार बारम्बार है ॥ ७ ॥

आनन्द लहर (नं १०)

जगत में जाहिर है, हो भवियण ! पूज्य जवाहिरलाल ॥ टेर ॥
मालवा देश में थान्दलो हो भवियण, भले डूगर के माय।
जीवराज जी तात है हो भवियण नाथ कुंवर के जाय ॥ १ ॥ जगत
मोहनी मूरत आपरी हो भविपण, अनुभव आप महान्।
धीर वीर गंभीर है हो भवियण, कई सूत्रों का यह ज्ञान ॥ २ ॥ जगत
मुख कान्ति सुन्दर घणी हो भवियण, शीतल चन्द्र समान।
महिमा अपरम्पार है हो भवियण, कर न सकूं मैं बयान ॥ ३ ॥ जगत
तुम गुण सुमरत मन माहि हो भवियण, आनन्द होत अपार।
काम धेनु सम पूज्य जी हो भवियण, सब भणी सुख कार ॥ ४ ॥ जगत
मीठा वाणी आपरी हो भवियण, वरसे अमृत धार।
सत्पुरुषारी वाणी ही हो भवियण जग में तारणहार ॥ ५ ॥ जगत
मोह मिथ्या तम हरते हैं हो भवियण, ज्यों दिन कर प्रकाश।
पूज्य के नाम अरु ध्यान से हो भवियण होत करम का नाश ॥ ६ ॥ जगत

सम्वत् उगणी एककाणू हो भवियण, पौष कृष्णा सुखदाय ।
छट्ट गुरु अति ...ष्ट है हो भवियण, शोभोलाल गुण गाय ॥ ७ ॥ जगत
जगत में जाहिर है हो भवियण, पूज्य जवाहिरलाल ।

राग मांच (नं० ११)

पूज्य जी ज्वाहिर गुणधारी, कलि में प्रगटे अवतारी ॥ टेर ॥
मालवा देश के मांही, थांदला शहर सुखदाई ।
सम्वत् बत्तीसा के माँही, जनम दीना है नाथी बाई ॥
दोहाः- बाल्य काल ही में हुआ, मात पिता अवसान ।
पालन पोषण किया मातुल ने, तेरह वर्ष अनुमान ।
जगत में बात यही जारी, कलि में प्रगटे अवतारी ॥ १ ॥
मोह संसार का तज दीना, अड़तालीस में संयम लीना ।
गुरु जी मगन मुनी कीना, गुरु को बहुत विनय कीना ॥
दोहाः- सूत्र सिद्धान्त अति भणे, पण्डित प्रखर महान ।
ज्ञानी ध्यानी और सयमी, महा गुणों की खान ॥
जगत में महिमा विस्तारी, कलि में प्रगटे अवतारी ॥ २ ॥
धन्य है रतनपुरी भाई, पूज्य श्री पदवी वहां पाई ।
चादर श्रीलाल ओढाई, हजारों जनता के मांही ॥
दोहाः- हुक्म मुनि का गच्छ में, हुए पुज्य श्रीलाल ।
उन्हीं पूज्य के पद पैशों में, पूज्य जवाहिरलाल ॥
दिपाया पाट को भारी, कलि में प्रगटे अवतारी ॥ ३ ॥

नं० १२

धन्य अजरामर ने पाया, सैंकड़ों आये मुनीराया ।
सफल सम्मेलन करवाया, सभी जन का मन हर्षाया ॥
दोहाः- पञ्चों ने सुनाया फैसला, एक सम्प के काज ।
सुनकर निर्णय पांच पञ्च का, हर्षी जैन समाज ॥

बनाये युवाचार्य भारी ॥४॥ कलि में प्रगटे अवतारी ॥
दीपती हैं सुन्दर सुरत मोहनी जिनकी है मूरत ।
हटाया काम क्रोध भूरत, पाखण्डी रहते हैं घूरत ॥
दोहा-इन्दर बाई मात है, माहेबलालजी तात ।
गणेशलालजी नाम आपको, युवाचार्य विख्यात ॥
कीर्ती फैल रही भारी ॥५॥ कलि में प्रगटे अवतारी ॥
सम्वत् एकाणू के माही, पोष कृष्णा है सुखदाई ।
पंचमी मंगल है भाई, लावणी 'शोभालाल' गाई ॥
दोहा चरण कमल में म्हारी अर्जी, सुनिये श्री पुज्यराज ।
करके कृपा अब शीघ्र भेजना युवाचार्य महाराज ॥
फाल्गुण मास शेषेकारी ॥६॥ कलि में प्रगटे अवतारी ॥

लावणी नं० १३

म्हारा पूज्य जवाहिरलाल अति सुहावना रे ।
धन धन एसे आचारज पुण्यवान, यहां पर पावना रे ॥ टेक ॥
धन २ नाथी बाई महतारी, जिनकी कोख करी उजियारी ।
धन २ जीवराजजी तात, ऐसा सुत पावना रे ॥ १ ॥
तीजे आचारज पद सोहे, चारों तीरथ का मन मोहे ।
दुर्मति निकट न आय, ऐसे पूज्य ध्यावना रे ॥ २ ॥
आपने धर्म्म रमा पुज्यराज, पधारे रतलाम के माज ।
दर्शन हो गये कलियों का खिल जावेगा रे ॥ ३ ॥
आप करके कृपा यहां आवे, संग में हर्ष चाट मुनि लावे ।

शेखेकाल विराज आप, अमृत बरसावना रे ॥ ४ ॥
पूज्य को महिमा अति भारी, मुख से नहीं जावे विस्तारी ।
करके दर्शन आपके होती, सदा शुद्ध भावना रे ॥ ५ ॥
व्याख्यान छटा अति भारी, मैं तो जाऊं क्रोड़ बलिहारी ।
अबतो युवाचार्य के लिये हुक्म फरमावना रे ॥ ६ ॥
सम्वत् एकाणू के साल अर्जी करता 'शोभालाल' ।
सब जन बोलो जय जय कार, सदा गुण गावना रे ॥ ७ ॥
झुक झुक मैं तो शीश नमाऊं, हां शीश नमाऊं ।
बलिहारी पुज्यराज, अमृत वाणी बरसावनारे ॥ ८ ॥
दास "शोभा" है चरणों का चाकर, चरणों का चाकर ।
सब मन सारो काज, शेखे काल विराजनारे ॥ ९ ॥
धन्य हमारे भाग्य, पूज्य का यहां पधारनारे ॥

लावणी नं० १४.

शरण मैं आया तुम्हारी रे, (शरण)
पूज्य श्री जवाहिरलाल अरज अब सुणो हमारी रे ॥
जीवराजजी पिता आपके, नाथी बाई मात ।
थांदला शहर में जनम लियोजी कांई ओसवाल थांरी जात ॥
लागती सब को प्यारी रे ॥१॥ पूज्य श्री जवाहिरलाल अरज०-
सत्तरे मेंई संयम धारी, दोष बयांलीस टाले ।
ज्ञान ध्यान में पूरण भरिया, जिन मारग उजवाले ॥
मोह ममता को मारी रे ॥२॥ पूज्य श्री जवाहरलाल अरज०-

समा तणा गुण आपका अधिक, विद्या में भरपूर ।
ऐसे मुनि के चरण शरण से दुख जावे सब दूर ॥
मुनि मोटा उपगारी रे ॥३॥ पूज्य श्री जवाहिरलाल अरज०-
ज्ञानी ध्यानी पूज्य श्री को, वन्दन करू त्रिकाल ।
समकित होवे निर्मलीस काई, पावे मगल माल ॥
सूरत मोहनगारी रे ॥४॥ पूज्य श्री जवाहिरलाल अरज अव०-
तेरह ठाणा सू आप विराजो, वरते सुख शाता ।
खूब विराजो उदयापुर में, सब के मन भाता ॥
लागती वाणी प्यारी रे ॥५॥ पूज्य श्री जवाहिरलाल अरज अव०-
उदयपुर का श्रावक श्राविका, एक करे अरदास ।
गन्नूलालजी ने रख जावो, कलपता एकजमास ॥
अरज लीजो अब धारी रे ॥६॥ पूज्य श्री जवाहिरलाल अरज अव०
[illegible] [illegible] म [illegible] करना, [illegible] पु[illegible] ज ।
चातुमास के लिये भजन, युवाचार्य महाराज ॥
अर्ज सुन लीजो हजारी रे ॥७॥ पूज्य श्री जवाहिरलाल अरज०-
किस रसना से महिमा गाऊ, गुण को पार न आवे ।
शोभालाल चरणों का चाकर लुल लुल शीश नमावे ॥
वन्दना मानों हमारी रे ॥८॥ पूज्य श्री जवाहिरलाल अर्ज अव०-

लावणी नं० १५.

अर्जी सुनिये श्री पुज्यराज, दर्शन देयजो देयजो देय.ो ॥
कर जोड़ करू मैं अर्जी, आप सुण लीजो पुज्यराजजी ।
फेर करजो कर्‍यो नो मर्जी, अमृत रस पायजो पायजो पायजो ॥१॥
[illegible] [illegible] इन कलियों की बहार, करना फिर इनका उद्धार ।
[illegible] रहना इनकी समार, फिर पैर्‍या ही पायजो पायजो पायजो ॥२॥
सुन लीजो यह अरदास, रहती दर्शन की नित आस ।
बिनती सुन लीजो यह खास भूल मत जायजो जायजो जायजो ॥३॥

पूज्य गुण सत्ताईस धारी, पुज्य महिमा अपरम्पारी।
पूज्य दे भव सागर से तारी, पाप को कापजो कापजो कापजो ॥४॥
सन्तोष क्षमो गुण भारी, पूज्य पूरण है उपकारी।
आपके चरणों में शिर डारी, पूज्य गुण गावजो गावजो गावजो ॥५॥
पूज्य नाम सदा सुखकारी, शोभा कहे अर्जी म्हारी।
पूज्य नाम सदा जय कारी, नित उठ ध्यावजो ध्यावजो ध्यावजो ॥६॥
अर्जी सुनिये श्री पुज्यराज०-

लावणी नं० १६.

(तर्ज- अरे हां हां रे मोरे बालमारे, नींवूड़ो भूले छै बाग में)
अरे हां हां रे मोरे पूज्यजी वेग पधारो ब्यावर में।
पन्च महाव्रत पालते रे लाल, करते पर उपगार ॥ मोरे ॥
कहते सदा शुभ सत्य के रे लाल। ध्याते निर्मल ध्यान ॥ मोरे ॥
देश विदेश में विचरते रे लाल, देते मधुर व्याख्यान ॥ मोरे ॥
आप तणा गुण गावता रे लाल, होवे परम आनन्द ॥ मोरे ॥
मौन त्याग धारी नम्रता रे लाल, षट काया प्रतिपाल ॥ मोरे ॥
सुनकर बचन कठोर को रे लाल, रहते मुदित अपार ॥ मोरे ॥
निर्मल किरियो को धार के रे लाल, पाले निर अतिचार ॥ मोरे ॥
बिन दर्शन पूज्यराज के रे लाल, तरसत जन समुदाय।
दास शोभा की वीनती रे लाल, संग लावो युवराज ॥ मोरे ॥

लावणी नं० १७.

(तर्ज रसिया- कांटो लागो रे देवरिया)
महिमा पूज्य श्री की कहां लग कहिये जाय, कहा लग कहिये जाय
भवियण कहा लग वरणी जाय ॥ टेर ॥
मालव देश में थांदलो कहिये, बसे डुंगर के मांय ॥ १ ॥ महिमा

जीवराजजी के पुत्र कहावें, नाथ कुवंर के जाय ।
गुरु मुख थी उपदेश सुनी ने, लीनो संयम भार ।
वैराग्य मांहे रमी रया थे, धन धन हो ब्रह्मचारी ॥ २ ॥ महिमा
नाम आपको ज्वाहिरलालजी, बहुत गुणों की खान ।
क्या तारीफ करू मैं आपकी, कर न सकु बयान ॥ ३ ॥ महिमा
बीज चन्द्र ज्यों कला बढत हैं, पूरण के उपकार ।
निरखत नैना तृप्त न होवे, सूरत मोहनगार ॥ ४ ॥ महिमा
ग्राम नगर पुर पाटण विचरत, कपासन में आय ।
चारों तीरथ मन मोहित कीना, हर्ष न दिल में समाय ॥५॥ महिमा
बहु उपकार कियो हम ऊपर, सुनिये श्री पूज्यराज ।
ऋद्धि आपका श्रीसंघ सारा, तिरण तारण की जहाज ॥ ६ ॥
कृपा करी थी चातुर्मास की, अब शेखे काल महाराज ।
दास 'शोभा' की यही है अर्जी, मानो नी पूज्य राज ॥७॥ महिमा

लावणी नं० १८.

दिखलाना दरस वेग हो पुजराजजी प्यारे, आगों के सितारे ।
बिछुडी हुई समाज को अब फौन आधारे, हो सिरताज हमारे ॥
चौथरो मेवाड मालवा मरू भूमि थली में, गुजरात सोरठ में ।
दिल आपका लगा रहे ज्यु धनु बाण में, इस रत्नपुरी में ॥
अब शोक हो हुजूर का ए बा रमाहे आले, उच्च भावना वाले ॥
अगर उदय की गादी को निज स्थान बनालो, थिरवास बनालो ॥
अमृत मे वेल सींच के हमें ला पिलाया, महा उपकार कराया ॥
आग शोक से तन होके सबने सिर है झुकाया, चरणों में लगाया ॥
सब मिलके प्रार्थना करें पूज्य दीर्घ आयु हो मता ज्ञान निधि हो ॥
मांगलिक सुनाते पूज्य के विहार रनि हो समर र भी रुचि हो ।

-: दान का चोक :-

दान शील तप चौथी भावना, कोयक चित से भावेगा ।
भगवत दरसावे, जीनो से अखे अमर पद पावेगा ॥ टेर ॥
संगम गवालीया पूर्व भव में, मुनीवर कूं वेराई खीर ।
भये शालभद्रजी सेठ गोभद्र, तणे घर घाले सीर ॥
एक दिवस आये व्योपारी, रत्न कम्बल तो सोले जीणा तीर ।
राजग्रह में फिरे जिनोके, बिकी नहीं होगये दिलगीर ॥ सेर ॥
भद्रा तो बैठी गोखड़े, लियावो थारी लांकजी मुख मांग्या दाम दीना ।
मेटी नगरनी वांकजी खंड बतीसे कर दीया, नारयां ने फेवेलो राजसी ॥
सासु क्युं मेलीना भाकला, वहु थाने दीया नाखजी (लावणी)
लेकर भंगण गई राजके मांही, राणी ने देख श्रेणक को सर्व सुणवाई ॥
सुणकर असवारी चले सेठ घर माही, भद्रा ने दीयो बहु मान-
कुमर को लाई ॥ दोड़ ॥ छूटी पर सेवा की सेर. मारे माथे घणी
फेर, कीनी करणी मांही देर, ऐसी दिल आई २ । नारी बनी सुई
लेखे, निज तजे एका एक सुभद्रा बेनी वेनी देख । केसी करी भाई २
धनो कहे सुण नार, एतो कायर गिमार, लिया सालाजी कु लार,
आठु छीटकाई २, धनो धण संजम धार, गये मुक्ति मजार,
शालभद्र अणगार स्वर्थ सिद्ध मांई (मलित) दान तणा फल प्रतक्ष
देखो, एक भयकर शिव जायेगा ॥ १ ॥

श्री० १००८ श्री पूज्य श्री जवाहिरलालजी महाराज का स्तवन।

भज भज ले प्यारे पूजने, मोहे जाल हटाया ॥ टेर ॥
पच महाव्रत पाल आपने, आतम अपनी तारी ॥
तारी रे तारी, हां, तारी रे तारी ॥ भज० ॥ १ ॥
षट काया के पीहर आप हैं, पर उपकारी भारी ।
भारी रे भारी, हां, भारी रे भारी ॥ भज० ॥ २ ॥
शीतलचन्द्र समान सोभते गुण रत्नों के धारी ।
धारी रे धारी, हां, धारी रे धारी ॥ भज० ॥ ३ ॥
पाखण्ड खण्डन जिन मत मण्डन, भवजीवन का तारी ।
तारी रे तारी, हां, तारी रे तारी ॥ भज० ॥ ४ ॥
दया धर्म प्रचार आपने कर दीना है जारी ।
जारी रे जारी, हां, जारी रे जारी ॥ भज० ॥ ५ ॥
समत उन्नीसे साल पच्चासी, अगहन मास के माई ।
माई रे माई, हां, माई रे माई ॥ भज० ॥ ६ ॥
मङ्गल अरज करे पूज्य थाने, शहर पधारन ताई ।
ताई रे ताई, हां ताई रे ताई ॥ भज० ॥ ७ ॥

॥ पूज्य श्री जवाहिरलाल जी मा० का स्तवन ॥

पूज्य जवाहिरलालजी स्वामी अन्तर्यामी, शिवसुखगामी, तारो जी दीनानाथ ॥ टेर ॥

अरज करूं मैं थांने पूज्य जी, हरख हुवो है अपार।
सम्वत बत्तीसमें जन्म लियो थे, शहर थांदले मांय हो ॥ पू० ॥ १ ॥

पञ्च महाव्रत सोहे पूज्यजी, करता उग्रविहार।
दोष बयालीस टाल मुनिश्वर। लावो सुजतो आहार ॥ पू० ॥ २ ॥

कामधेनु सम आप पूज्यजी, सर्व भणी सुखदाय।
दर्शन करके प्रसन्न होवे, सारोलोक संसार हो ॥ पू० ॥ ३ ॥

ठाणावारेसुं सोवो पूज्यजी गुण रत्नों की मोल।
महिमा आपकी कहांतक कहूं, कहत न आवे पार हो ॥ पू० ॥ ४ ॥

प्रश्न पुछै थांने पुज्य जी स्वमति अनमति कोय।
शान्ति पणेसुं जवाब देवोथे, सामलो शीतल थाय हो ॥ पु० ॥ ५ ॥

सम्वत उगनीसे मांय पुज्यजी, साल सितन्तेर थाय।
दूजा श्रावण बदि दशमी कांई मंगलचन्द्र जस गाय हो ॥ पु० ॥ ६ ॥

डागा बुकडिपो,

नया बाजार ब्यावर।

जीवन ग्रंथमाला पुष्प चौथा ।

जिनरिख जिनपाल

उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहाँ जो सोवत है ।
जो जागत है सो पावत है, जो सोवत है वो खोवत है ॥
टुक नींद से अँखियाँ खोल जरा, ओ ! गाफिल रब से ध्यान लगा ।
ये प्रीत करन की रीत नहीं, सब जागत हैं तु सोवत है ॥
नादान भुगत करनी अपनी, ओ पापी ! पाप में चैन कहाँ ।
जब पाप की गठरी शीश धरी, फिर शीश पकड क्यों रोवत है ॥
जो काल करे वो आज ही कर, जो आज करे वो अब करले ।
जब चिडया खेती चुग डारी, फिर पछतावे क्या होवत है ॥

प्रकाशक—

जीवन कार्य्यालय, अजमेर

प्रथमावृत्ति २०००   सन् १९३४   मूल्य)॥।

कृतज्ञता-प्रदर्शन

जीवन-ग्रंथ-माला की लोकप्रियता का इससे अधिक प्रमाण क्या होगा कि अनेक धर्म भाव प्रेमी महानुभाव 'माला' से प्रकाशित होनेवाले ग्रंथों के छपने के पूर्व ही ग्राहक हो जाते हैं। ग्रंथमाला की ओर से हम ऐसे महानुभावों की नामावली देते हुए उन्हें हार्दिक धन्यवाद देते हैं। इसके साथ ही हम अन्य धर्मप्राण महानुभावों से भी प्रार्थना करते हैं कि दया दान द्वारा सत्साहित्य के प्रचार में वे हमारा हाथ बटावें जिससे हम सेवा करने में अधिकाधिक योग दे सकें।

श्रीमान्	सेठ	छगनमलजी गोदावत	छोटी सादड़ी
,,	,,	रिखबदासजी नथमलजी नलवाया	छोटी सादड़ी
,,	,,	गुमानमलजी पृथ्वीराजजी नाहर	छोटी सादड़ी
,,	,,	घेवरचन्दजी जामड़	किशनगढ़
,,	,,	छीतरमलजी मिलापचन्दजी दरड़ा	मदनगञ्ज
,,	,,	लाभचन्दजी चौधरी	जावद
,,	,,	भँवरलालजी रूपावत	जावद
,,	,,	सोभालालजी मोड़ीवाला	जावद
,,	,,	मिश्रीमलजी जौरीमलजी लोढ़ा	अजमेर
,,	,,	श्रीचन्दजी अब्बाणी	ब्यावर
,,	,,	तनसुखदासजी दूगड़	सरदारशहर
,,	,,	खूबचन्दजी चण्डालिया	सरदारशहर
,,	,,	नथमलजी दस्साणी	बीकानेर
,,	,,	हीरालालजी सिंघी	बीकानेर

जिनरिख जिनपाल

-⟩⟨-

चपा नगरी में कोणिक नामक राजा था। वहां माकन्दी नामक एक बडा धनवान् सेठ रहता था। उसके भद्रा नामकी स्त्री तथा जिनपालित और जिनरक्षित नामक दो पुत्र थे। वे दोनों भाई चतुर, साहसी और विलक्षण व्यापारी थे। अब तक नानाप्रकार के किराने से भरे हुए बडे-बडे जहाजों को लेकर उन्होंने लवण समुद्र की यात्रा करके अतुल संपत्ति उपार्जित की थी। एक बार फिर उन दोनों भाइयों ने सामुद्रिक यात्रा का विचार करके उस विषय में अपने माता पिता की आज्ञा मांगी। माता-पिता ने कहा —

"पुत्रो! अब तो तुम एकत्रित की हुई अपार संपत्ति का उपयोग ही करते रहो तो अच्छा है। अधिक समुद्र-यात्रा का साहस अब मत करो। तुम लोग अनेक बार की यात्रायें सकुशल समाप्त कर चुके हो यही कम महत्व की बात नहीं है।"

परन्तु दोनों भाइयों को तो समुद्र-यात्रा की ही एक-मात्र धुन थी। और इसी लिए जिस तरह बना उसी तरह माता-

पिता की आज्ञा प्राप्त कर, जहाज़ों पर सवार होकर, वे समुद्र-यात्रा को निकल पड़े।

समुद्र में उन्होंने थोड़ा ही रास्ता तय किया होगा कि इतने में आकाश में मेघ मालायें घिर आईं, बादल गरजने लगे और साथ ही साथ प्रचंड तूफानी हवा चलना शुरू हो गई। थोड़ी ही देर में जहाज़ उछल-उछल कर आपस में टकराने लगे। पटिये टूटने लगे, पालें फटने लगीं। कुछ ही समय में तो नाविक, कर्णधार और व्यापारी इस आकस्मिक विपत्ति से घबराकर हाहाकार करने लगे। मस्तूलें टूटीं, ध्वजाएं पड़ गईं; बल्लियों के टुकड़े-टुकड़े होगये? देखते ही देखते वे सब जहाज़ पहाड़ से टकराकर, समुद्र के गर्भ में विलीन होगये। इस तरह असंख्य धन और मनुष्य भी जहाज़ के साथ ही साथ नष्ट होगये।

दैवयोग से दोनों भाइयों के हाथ एक बड़ा सा लकड़ी का तख़्ता लग गया; उसी के सहारे तैरते-तैरते वे दोनों एक अद्भुत द्वीप के पास पहुँच गये। उस द्वीप का नाम रत्न द्वीप था वह बड़े-बड़े सुन्दर महलों, दर्शनीय स्थानों और नाना प्रकार के वृक्षों से सुशोभित हो रहा था। वहां एक भयंकर दुष्ट देवी अपने भव्य महल में निवास करती थी। महल के चारों ओर बड़े-बड़े जंगल थे।

किनारे लगते ही दोनों भाइयों ने खूब विश्राम किया। पश्चात् आस पास घूम फिर कर, फलों को बीन-बीन कर भूख

शात की सरदी से बचने के लिए नारियल बीनकर उससे शरीर मर्दन किया। पास की पुष्कारिणी में स्नान करके दोनों भाई पृथ्वी शिला पटपर विश्राम से बैठे।

चपानगरी, माता पिता की आज्ञा, समुद्र यात्रा, प्रचंड पवन का उत्पात, जहाजों का टूटना, तख्ते का मिलना, और इस द्वीप के किनारे उतरना ये सब आकस्मिक घटनाय उन्हें स्वप्न की तरह प्रतीत होने लगीं।

कुछ समय बीतते ही दोनों भाइयों के आने की बात जानकार वह देवी उनके पास आकर कहने लगी —

"माकदी पुत्रो ? यदि तुम्हें अपना जीवन प्यारा हो तो मेरे महल में चलो और नाना प्रकार से मेरे साथ भोग विलास करो नहीं तो इस तीक्ष्ण तलवार से तुम्हारे सिर धड से उडा दिये जावेंगे।"

दुष्ट देवी के इस प्रकार के वचन सुनकर दोनों भाई डरकर, उसकी इच्छानुसार उसके महल में जाकर उसके साथ काम क्रीडा करते हुए रहने लगे। देवी भी उस द्वीप में उत्पन्न होने वाले अमृत समान फलों को ला ला कर उन्हें देते हुए उनकी पत्नी के समान रहने लगी। एक दिन लवण समुद्र के सुस्थित नाम के रखवाले ने उस देवी से आकर कहा कि" तुझे इक्कीस बार इधर से उधर फिर कर लवण समुद्र में पडे हुए घास-पात, लकडियाँ कूडा-कर्कट या दूसरी पडी हुई अपवित्र वस्तुओं को निकाल कर साफ करने की इन्द्र ने आज्ञा दी है।

लवण समुद्र को साफ करने के लिए जाते समय उस देवी

ने दोनों भाइयों को कहा "हे देवानुप्रियो ! तुम यहाँ ही रहना कहीं जाना मत। मेरे वियोग से व्यथित होकर कहीं बाहर घूमने फिरने की इच्छा तुमको कभी हो जाय तो दक्षिण दिशा कोछोड़कर बाक़ी सभी दिशाओं के वनखंडों में विहार करना। पूर्व के वनखंडों में सर्वदा वर्षा और शरद् ऋतु के दृश्य होंगे; कितने ही लता मंडप होंगे और अनेक सुन्दर पुष्कर-णियाँ। इन सभी स्थानों में तुम सानंद विचरण करना।
जब वहाँ घूमते हुए जी उकता जाय तो उत्तर के वनखंडों में जाना। वहाँ हमेशा शिशिर और हेमंत ऋतुओं के दर्शन होंगे।

वहाँ भी जब जी न लगे तो पश्चिम दिशा की ओर मुड़ जाना। वहाँ तुम्हें वसंत और ग्रीष्म ऋतु के आनंद प्राप्त होंगे।

वह वनखंड बने सुन्दर आम्र वृक्षों एवं अशोकादि नाना प्रकार के वृक्षों से अत्यंत सुशोभित हैं। जब वहां भी तुम्हारी तबियत उचट जाय तो फिर वापिस महल में चले आना। दक्षिण दिशा की ओर तो भूल कर भी मत जाना। क्योंकि वहां जिसकी दृष्टिमात्र से ही मृत्यु हो जाती है, इस प्रकार का एक भयंकर उग्र विष वाला दृष्टिविष सर्प रहता है।"

देवी के जाने के पश्चात् दोनों भाई उन वनखंडों में बारी-बारी से सानंद घूमने लगे। देवी ने सर्प का भयंकर रूप बतलाकर दक्षिण दिशा की ओर जाने में जो निषेध किया था इसी कारण उनके मन में उस ओर जाने की कुतूहलता पूर्ण उत्सुकता हो रही थी।

अंत में एक दिन निश्चय करके उसी दिशा की ओर उन्होंने

पैर बढाये। थोडी दूर जाते ही चारों ओर से उन्हें असह्य दुर्गंध आने लगी। इतना होते भी वे नाक तथा मुँह पर कपड़ा लपेट कर आगे बढते ही चले गये। वहा उन्हें शूली पर लटके हुए एक पुरुष का करुणापूर्ण रोदन सुनाई दिया। कौतूहलवश उन्होंने उसके पास जाकर पूछा —

"हे देवानुप्रिय! यह वधस्थान किसका है? तुम कौन हो? कहा से आये हो! और इस भयकर वेदना में तुम्हें किसने ढकेल दिया है? उत्तर में उसने कहा 'हे देवानुप्रियो! यह वध स्थान इस द्वीप की देवी का है। मैं माकंदी का निवासी और घोड़ों का व्यापारी हूँ। कितने ही अश्वों और किरानों को लेकर बड़े-बडे जहाजों में लादकर, लवण समुद्र की यात्रा मैंने की थी। दुर्दैववश मेरा जहाज समुद्र में एक चट्टान से टकराकर नष्ट हो गया। केवल एक पाटिये के सहारे तैरता-तैरता इस द्वीप के किनारे पहुँच गया और इस द्वीप की देवी के साथ भोग विलास करता हुआ महलों में आनन्द पूर्वक रहने लगा। एक दिन उसकी इच्छा के कुछ विपरीत चलते ही उसने क्रोधवश मेरी यह दशा करदी। हे देवानुप्रियो! पता नहीं तुम्हारी भी वह इसी प्रकार की दुर्दशा कब कर डाले?

इतना सुनते ही दोनों भाई डर से कापने लगे और बडी विनय से उस द्वीप से छुटकारा पाने का उपाय उस पुरुष से पूछने लगे। उत्तर में उस पुरुष ने कहा "हे देवानुप्रियो पूर्व दिशा के वनखड में शैलक नामक एक यक्ष का यक्षायतन (यक्ष का निवासस्थान) है। वह प्रत्येक मास की चतुर्दशी,

अष्टमी,अमावस्या और पूर्णिमा के दिन आकर ऊँचे स्वर से कहता है कि "किसको रक्षा करूँ? किसका उद्धार करूँ" इस लिए तुम दोनों इसी चतुर्दशी पर उसके निवासस्थान को ओर जाओ; उसकी सेवा पूजा करो और उससे कहो "हमारी रक्षा कर,' 'हमारा उद्धार कर'।

उसके बतलाये अनुसार चतुर्दशी के दिन दोनों भाइयों ने यक्षायतन में जाकर अपने उद्धार और बचाव की प्रार्थना उस यक्ष से की।

यक्ष ने उनसे कहा कि "मैं तुमको बचादूँगा और तुम्हारा उद्धार भी कर दूँगा। घोड़े के रूप में जब मैं तुम्हें अपनी पीठ पर बिठला कर लवण समुद्र में चलूँगा उस समय वह दुष्टदेवी तुम्हें चिढ़ाने के लिए या शृंगार भरे हाव भाव और कटाक्षों से लुभाने का तुमपर खूब ही प्रयत्न करेगी। उस समय तुम्हें दृढ़ता दर्शानी होगी। जरा भी उसके हाव भाव से पिघलना नहीं, उसकी ओर देखना भी नहीं। जब तक मेरी पीठ पर रहोगे तब तक तुम्हें स्पर्श करने की भी शक्ति किसी में नहीं? परन्तु लोभ या भय के वशवर्ती होकर तुम्हारे उसकी ओर देखते ही मैं तुम्हें अपनी पीठ पर से समुद्र में ढकेल दूँगा और फिर वह देवी तत्काल ही तुम्हारा नाश कर देगी"। दोनों भाइयों ने उस यक्ष के कथनानुसार ही दृढ़ता पूर्वक रहने का निश्चय दिलाते हुए उसकी पीठ पर सवार होकर बड़े बेग से चंपा नगरी की ओर प्रस्थान कर दिया।

लवण समुद्र को साफ करके महल में आते ही देवी ने उन दोनों भाइयों को वहां नहीं देखा। तत्काल ही उसकी दृष्टि में सब घटना आगई और वह तलवार हाथ में लेकर उनके पीछे दौड़ी? उनके पास आकर दोनों भाइयों को उसने अनेक प्रकार से डराया पर जब वे किञ्चित् भी डरे नहीं तब उसने शृंगार भरे हाव भावों से उन्हें लुभाने का प्रयत्न किया। उसे ऐसा बोध हुआ कि जिनरक्षित कुछ प्रभावित हो रहा है अतएव उसे ही उद्देश्य रखकर वह बड़े मीठे स्वर में कहने लगी —

"हे प्रिय! हे वल्लभ! हे कांत! मैं इस जिनपालित की तो प्रिय नहीं थी परन्तु तुमको तो अत्यंत प्रिय थी। तो फिर तुम किस लिए मुझ बिना किसी कारण अकेली छोड़ कर चलेजारहे हो! तुम्हारे बिना इस लवण समुद्र में मेरे दिन किस प्रकार व्यतीत होंगे?

हे कांत! अगर तुम्हें किंचित् भी तर्स नहीं आता तो मैं यहीं प्राण त्याग दूंगी"। उसके इस प्रकार प्रेम और अनुनय विनय भरे वचनों को सुनकर जिनरक्षित करुणरस* से आर्द्रित होकर उस के मोह में फँस गया और उसकी ओर

---

* कितने ही हमारे भोले भाई इस करुण रस को करुणा (अनुकंपा) कह कर भ्रम में पड़े हुए हैं किंतु यहां पर करुण रस का वर्णन है।

जिन ऋषिने रयणा देवी पर अनुकम्पा करके उसे देखा था यह भ्रमविध्वंसनकारको बात बिलकुल झूठी और मूलपाठसे विरुद्ध है। वहां मूल पाठमें अनुकम्पाका नाम नहीं है वहाँ यह पाठ आया है—

देखने लगा। उसी समय उस यक्ष ने अपनी पीठ ऊपर से उसे ज़ोर से समुद्र में फेंक दिया। देवी ने तत्काल ही उसे

"समुप्पन्न कलुणभावं" इस पाठमें जो "कलुण" शब्द आया है वह अनु कम्पा अर्थ में नहीं है क्योंकि रयणा देवीपर जिन ऋषिकी अनुकम्पा उत्पन्न होने का कोई कारण न था किन्तु प्रियाके वियोगसे जो करुण नामक एक रस उत्पन्न होता है उसकी वहां साग्रीम पूर्णरूप से मौजूद थी इसलिये रयणा देवीके प्रति जिन ऋषिका करुण रस ही उत्पन्न हुआ था अनुकम्पा नहीं अतः उक्त पाठ में आया हुआ "कलुण" शब्द करुणरस का ही बोधक है अनुकम्पा का नहीं।

ज्ञाता सूत्र के मूल पाठ में साफ साफ लिखा है कि रयणा देवी के विचित्र हाव भाव और कटाक्ष तथा सुरत सुख को स्मरण करके तथा उसके मनोहर शब्द और भूषणों को मधुर ध्वनि सुन कर जिन ऋषि के हृदय में करुण भाव(रस)उत्पन्न हुआ था इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि जिन ऋषि का रयणा देवी के ऊपर करुण रस उत्पन्न हुआ था अनुकम्पा नहीं क्योंकि अपनी प्रिया के हाव भाव कटाक्ष और सुरत सुख के स्मरण करने से और उसके मनोहर वाक्य तथा भूषणों की ध्वनि सुनने से करुण रस ही उत्पन्न होता है अनुकम्पा नहीं उत्पन्न होती है। वह ज्ञाता सूत्र का पाठ यह है :—

"ततेणं से जिण रक्खिये चलमणे तेणेव भूसणरवेणं कण्णसुह मनोहरेणं तेहिंय सप्पणय सरल महुर भासिएहिं संजायविउलराए रयण देवीस्स देवयाए तीसे सुन्दर थण जहण वयण कर चरण नयन लावण्ण रूप जोवण सिरींचदिव्वं सरभस उवगूहियाइं जातिं विव्वोय विलसिताणिय

तलवार पर झेलकर उसका अंत कर डाला। उसके पश्चात् वह जिनपालित को लुभाने का प्रयत्न करने लगी। परन्तु जब

विहसिय सकडक्खदिट्ठी निस्ससिय मलिय उवललिय ठियगमण पणयखि-जिय पासादियाणिय सरमाणे राग मोहियमइ अवसे कम्मवसगए अवयक्खति मगतो सविलिय। ततेण जिणरक्खिय समुप्पन्नकलुण भावं मच्चुगलत्थलणोलियमइ अवयखत तहेव जक्खेय सेलए जाणिउण सणियं उव्विहति नियग पिट्ठाहिं विगयसत्थ। ततेण सा रयण दीव देवता निस्ससा कलुण जिण रक्खिय सकलुसा सेलग पिट्ठाहिं उवयत दास! मओसीत्ति जम्पमाणी अप्पत्त सागर सलिल गेण्हिय वाहाहिं आरसत उड्ढ उव्विहति अवर तले ओवयमाणच मडलग्गेण पडिच्छित्ता नीलुप्पणधवल अयसिप्प गासेण असिवरेण खडाखडि करेति"

(ज्ञाता अ० ९)

अर्थ :—

इसके अनन्तर उस जिन रक्षित का मन रयणा देवी के ऊपर चलायमान हो गया। रयणा देवी के कर्ण मनोहर भूषण शब्द, और प्रेम सहित सरल-मृदु भाषण से जिन रक्षित का राग (मोह) रयणा देवी पर पहले से भी ज्यादा बढ कर द्विगुण हो गया। रयणा देवी के सुन्दर स्तन, जघन, मुख कर चरण और नयनों के लावण्य को तथा उसके शरीर की सुन्दरता दिव्य यौवन की शोभा हर्ष के साथ आलिङ्गन करना स्त्री चेष्टा विलास मधुर हास्य सकटाक्ष दर्शन निःश्वास सुखद अग स्पर्श रति कूजित अक तथा आसनादि पर बैठना हसवत् गमन प्रणय क्रोध और प्रसन्नता को स्मरण करके वह जिन रक्षित रयणा देवी पर मोहित हो गया वह अपने वश में नहीं रह सका। वह जिन रक्षित अवश और कर्म वशीभूत होकर पीछे से आती हुई रयणा देवी को लज्जा के साथ देखने लगा।

इसके अनन्तर प्रिया के वियोग से जिसको करुण रस उत्पन्न हो गया था और मृत्यु से जिसका गला पकड लिया गया था जो यमपुरी जाने के

बहुत डराने गिड़गिड़ाने, रुदन करने और हाव भाव बतलाने पर भी वह डरा नहीं, तब हारकर वह अपने महल को चली गई।

लिये तत्पर हो गया था। जो रयणा देवी को प्रेम सहित देख रहा था ऐसे जिन रक्षित को उस शैलक यक्ष ने धीरे-धीरे अपने पृष्ठ से नीचे गिरा दिया।

इसके अनन्तर मनुष्यों का घात करने वाली द्वेष से पूर्ण हृदय वाली उस रयणा देवी ने शैलक यक्ष के पृष्ठ से गिरते हुए करुणारस से युक्त उस जिन रक्षित को अरे दास ! मरा ऐसा कहती हुई समुद्र में पहुँचने के पहले ही अपनी भुजाओं से ऊपर आकाश में फेंक दिया पश्चात् अपने तीक्ष्ण शूल के ऊपर उसे रोप कर तीक्ष्ण तलवार से खण्ड-खण्ड कर डाला।

यह ज्ञाता सूत्र के ऊपर लिखे हुए मूल पाठ का अर्थ है।

यहाँ साफ-साफ लिखा है कि रयणा देवी के भूषणों के मनोहर शब्द और उसके कर्णमधुर वाक्यों को सुनकर जिन रक्षित का राग रयणा देवी के ऊपर पहले से भी अधिक हो गया तथा रयणा देवी के शरीर की सुन्दरता और स्तन जघन मुख आदि अंगों को देख कर जिन रक्षित उसके ऊपर मोहित हो गया। मोहित होकर जिन रक्षित रयणा देवी की ओर देखने लगा। यहां रयणा देवी पर मोहित होकर जिन रक्षित का उसकी ओर देखना कहा है अनुकम्पा के कारण देखना नहीं कहा है। अतः जिन रक्षित का रयणा देवी के ऊपर मोह उत्पन्न हुआ था अनुकम्पा नहीं उत्पन्न हुई थी इस पाठ में जो "समुपन्न कलुणभावं" यह जिन रक्षित का विशेषण आया है इसका अर्थ भी रयणा देवी के ऊपर प्रिय वियोग से उत्पन्न होने वाला करुणारस का उत्पन्न होना ही है अनुकम्पा होना नहीं। अनुयोग द्वार सूत्र में प्रिय के वियोग से करुणारस की उत्पत्ति बताई है वह पाठ यहां लिखा जाता है—

"नव कव्व रसा पण्णत्ता तंजहा—

चपा नगरी के पास पहुँचते ही यक्ष ने जिनपालित को एक बगीचे में उतार दिया। उसनें अपने घर आकर रोते हुए

"वीरो सिंगारो अब्भुओ रोद्दो होइ बोद्धव्वो।
वेलणओ बीभच्छो हासो कलुणो पसतो अ"
(अनुयोग द्वार सूत्र)

अर्थ —

नौ प्रकार के काव्य के रस होते है—(१) वीर (२) श्रृगार (३) अद्भुत (४) रौद्र (५) ब्रीडनक (६) बीभत्स (७) हास्य (८) करुण (९) प्रशान्त।

यहाँ करुण नामक एक रस बताया गया है उसकी उत्पत्ति का कारण भी इसी जगह मूल पाठ में कहा है —

'पिय विप्पयोग बध वह वाहि विणिवाय सम्ममुप्पण्णो। सोइय विलविय अपम्हाण रुण्णलिंगो रसो करुणों" करुणों रसो जहा—"पज्झाय किलामियय वाहागयपप्पुअच्छिय बहुसो। तस्सवियोगे पुत्तिय दुब्बयते मुह जाय'

(अनु० गाथा १६।१७)

अर्थ —

प्रिय के साथ वियोग होने से तथा बन्धन, वध, व्याधि, पुत्रादि मरण और पर राष्ट्र के भय होने से करुण रस उत्पन्न होता है। चिन्ता करना विलाप करना उदास होना रोगी होना इसके लक्षण है। इसके उदाहरण की गाथा का यह अर्थ है—

प्रिय वियोग मे दुःखित बाला से कोई वृद्धा स्त्री कहती है कि–हे पुत्रि। अपने प्रिय की अत्यत चिन्ता करने से तुम्हारा मुख खिन्न हो गया है और अविरल अश्रु धारा से तुम्हारी आख सदा भरी रहती है।

यहा प्रिय के वियोग से करुण रस की उत्पत्ति बता कर प्रिय के वियोग म अत्यत दुःखित बाला का उदाहरण दिया है

आप बीती और जिनरक्षित की मृत्यु की सब घटनायें माता-पिता को कह सुनाईं। कुछ समय बीतने पर शोक को भूलते हुए सब सुखपूर्वक रहने लगे।

एक बार चंपा नगरी के पूर्ण भद्र उद्यान में भगवान् महावीर का पधारना हुआ। जिनपालित भगवान के धर्म प्रवचन सुन कर अपनी जीवन शुद्धि के लिए माता-पिता की सम्मति प्राप्त कर भगवान से दीक्षा लेकर संयम पूर्वक रहने लगा। हे जंबु जिस प्रकार देवी के हाव भाव से मोहित होकर शैलक यक्ष की पीठ पर से गिरकर हज़ारों जलचरों से व्याप्त समुद्र में मरण को प्राप्त हुआ; उसी प्रकार जो साधु और साध्वियाँ (अविरत से) मोह को नहीं त्याग कर मोह के बंधन में फंसकर चरित्र भ्रष्ट हो जाते हैं वे भयंकर स्वभाव वाले अपार संसारसागर में पड़ कर भ्रमण करा करते हैं!

उसी प्रकार हे जंबु! जिस प्रकार जिनपालित देवी से न डरते हुए अपने स्थान पर जाकर जीवन और सुख प्राप्त किया उसी प्रकार जो साधु और साध्वियों सर्व प्रकार के मानुषिक काम भोगों को एक बार छोड़ने पर उनकी इच्छा नहीं करते वे इस भयंकर संसार सागर को उल्लंघन कर सिद्धपद को प्राप्त होते हैं।

इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि रयणा देवी के वियोग से जिन ऋषि के हृदय में करुण रस उत्पन्न हुआ था अनुकम्पा उत्पन्न नहीं हुई थी। अतः रयणा देवी के ऊपर जिन ऋषि के करुणरस को अनुकम्पा कायम करके अनुकम्पा को सावद्य बताना अज्ञानियों का कार्य्य है।

मुद्रक—प० प्रेमशकर शर्मा ओंकार प्रिंटिंग प्रेस अजमेर।

॥ ॐ ॥

जीवन ग्रन्थ-माला—पुष्प नं० २

प्रार्थना

संग्रहकर्त्ता—

पं० छोटेलाल यति

प्रथमावृत्ति ४०००

सन् १९२४

मूल्य एक आना ।

प्रकाशक—
जीवन कार्य्यालय,
अजमेर

मुद्रक—
आदर्श प्रिन्टिंग प्रेस,
अजमेर

॥ ॐ ॥

॥ श्री महावीरायनम ॥

॥ अथ चौबीसी पद ॥

दो०—*कर्म्म कलंक निवारने, थया सिद्ध महाराज ।*
मन वचन काये करी, वन्दुँ तेने आज ॥
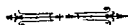
१—श्रीऋषभदेव स्तवन

(उमादे भटियाणी एदेशी)

श्री आदीश्वर स्वामी हो, प्रणमू सिरनामी तुम भणी।
प्रभू अतर जामी आप, मोपर म्हैर करीजे हो, मेटो जे चिन्ता मनतणी॥
म्हारा काटो पुराकृत पाप, श्री आदीश्वर स्वामी हो॥ टेर ॥१॥
आदि धरम की कीधी हो, भर्तक्षेत्र सर्पणी काल में।
प्रभु जुगला धरम निवार, पहिला नरवर १ मुनीवर हो २।
तीर्थंकर ३ जिनहुआ ४ केवली ५। प्रभु तीरथ थाप्यौं चार श्री०॥२॥
मा "मरु देव्या" थारी हो, गज होदे मुक्ति पधारियाँ।
तुम जनम्या ही प्रमाण, पिता "नाभिम्हाराजा" हो।
भव देव तणो करी नर थया, प्रभु पाम्या पद निरवाण ॥श्री०॥ ३॥

भरतादिक सौ नंदन हो, वेपुत्री "ब्राह्मी" "सुंदरी"।
प्रभू ए थारां अंग जात, सघला केवल पाया हो।
समाया अविचल जोत में, कांइ त्रिभुवन में विख्यात ॥श्री०॥ ४ ॥
इत्यादिक बहु तारया हो, जिन कुल प्रभु तुम ऊपना।
कांइ आगम में अधिकार, और असंख्या तारया हो।
उधारया सेवक आपरा, प्रभू सरणा इसाधार ॥ श्री० ॥ ५ ॥
अशरण शरण कहीजे हो, प्रभू विरद विचारो साहिबा।
कांइ अहो गरीब निवाज, शरण तुम्हारी आयो हो।
हूँ चाकर जिन चरना तणो, म्हारी सुणिये अरज अवाज ॥ श्री ॥ ६ ॥
तू करुणा कर ठाकुर हो, प्रभु धरम दिवा कर जग गुरू।
कांइ भव दुख दुष्कृत टाल, "विनयचंद" ने आपो हो।
प्रभु निजगुण संपतशास्वती, प्रभू दीनानाथदयाल ॥ श्री ॥ ७ ॥

२—श्री अजितनाथ-स्तवन

(कुविसन मारग माथे रे धिग ए देशी)

श्री जिन अजित, नमो जयकारी. तुम देवन को देवजी।
जय शत्रु राजा ने विजिया राणी को, आतम जात तुमेव जी।
श्री जिन अजित नमो जयकारी ॥ टेर ॥ १ ॥

दूजा देव अनेक जगमें, ते मुझ दाय न आवेजी।
तह मन तह चित्त हमने, तुहीज अधिक सुहावे जी ॥ श्री ॥ २ ॥
सेव्या देव घणा भव भव में, तो पिण गर्ज न सारी जी।
अबकै श्री जिनराज मिल्यौ तूँ, पूरण पर उपकारी जी ॥ श्री ॥ ३ ॥

त्रिभुवन में जस उज्ज्वल तेरो, फैल रह्यो जग जाने जी ।
वदनीक पूजनीक सकल को, आगम एम वखाने जी ॥ श्री ॥ ४ ॥
तू जग जीवन अंतरजामी, प्राण अधार पियारो जी ।
सबविधि लायक संत सहायक, भक्त वच्छल विरद थारोजी॥श्री॥५॥
अष्ट सिद्धि नव निद्धि को दाता, तो सम और न कोई जी ।
वधै तेज सेवक को दिन दिन, जेथ-तेथ होई जी ॥ श्री ॥ ६ ॥
अनत ग्यान दर्शन सम्पति ले, ईश भयो अविकारी जी ।
अविचलभक्ति 'विनयचंद' कू देवो, तो जाणू रिझवारीजी ॥श्री॥ ७ ॥

३—श्रीसम्भवनाथ स्तवन

(आज म्हारा पारसजी ने चालो वदन जइए ऐ देशी)

आज म्हारा सभव जिनके, हित चितसूँ गुण-गास्या ।
मधुर मधुर स्वर राग अलापी, गहरे शब्द गुंजास्या राज ।
आज म्हारा सभव जिनके, हित चितसूँ गुण गास्या ॥ आ० ॥ १ ॥
नृप "जितारथ" 'सेन्या' राणी, तासुत सेवकथास्या ।
नवधा भक्ति भाव सौ करने, प्रेम मगन हुई जास्याँ राज ॥आ०॥ २ ॥
मन वच काय लाय प्रभू सेती, निसदिन सास उसास्या ।
सभव जिनकी मोहनी मूरति हिये निरन्तर ध्यास्या राज ॥आ० ॥ ३ ॥
दीन दयाल दीन बधव के, खाना जाद कहास्या ।
तन-धन प्रान समरपी प्रभू को, इनपर वेग रिझास्याराज ॥आ०॥४॥
अष्ट कर्म दल अति जोरावर, ते जीत्या सुख पास्या ।
जालम मोहमार की जामें, साहस करी भगास्या राज ॥आ०॥ ॥ ५ ॥

ऊबट पंथ तजी दुरगति को, शुभगति पंथ स=ास्यां।
आगम अरथ तणे अनुसारे, अनुभव दसा अभ्यास्यां राज आ० ॥ ६ ॥
काम क्रोध मद लोभकपट तजि, निज गुणसूँ लवलास्यां।
विनयचंद संभव जिन तूठ्यां, आवागवन मिटास्यां राज॥आ०॥७॥

४—अभिनन्दननाथ-स्तवन

(आदर जीव क्षिम्या गुण आदर ऐ देशी)

श्री अभिनंदन, दुःख निकन्दन, बन्दन पूजन योगजी।
आसा पूरो, चिन्ता चूरो आयो सुख, आरोगजी ॥ श्री० ॥ १ ॥
"संबर" राय "सिधारथ" राणी, तेहनो आतम जात जी।
प्रान पियारो साहिब सांचौ, तुहा मातने तातजी ॥ श्री ॥ २ ॥
कैइयक सेब करें शंकर की, कैइयक भजें मुरार जी।
गणपति सूर्य उमा कैई सुमरें, हूँ सुमरूँ अविकारजी ॥श्री॥ ३ ॥
दैव कृपा सूँ पामें लक्ष्मी, सो इण भव को सुक्ख जी।
वो तूठाँ इन भव पर भव में, कदी न व्यापै दुःखजो ॥श्री॥ ४ ॥
जदपी इन्द्र नरिन्द्र निवाजें, तदपी करत निहालजी।
तूँ पुजनीक नरिन्द्र इन्द्रको, दीन दयाल कृपाल जी ॥ श्री ॥ ५ ॥
जब लग आवागमन न छूटै, तब लग ए अरदासजी।
सम्पति सहित ज्ञान समकित गुण, पाऊँ दृढ़ विसवासजी ॥श्री॥ ६ ॥
अधम उधारन विरुद तिहारो, जोवो इण संसारजी।
लाज 'विनयचन्द'की अब तौनें, भवनिधि पार उतारजी॥श्री॥ ७ ॥

५—श्री सुमतिनाथ-स्तवन

(श्रीसीतल जिन साहिबाजी ऐ देशी)

सुमति जिणेसर साहिबाजी, "मेघरथ" नृप नो नंद ।
"सुमंगला" माता तणो जी, तनय सदा सुखकंद ॥
प्रभू त्रिभुवन तिलोजी ॥ १ ॥

सुमति सुमति दातार, महा महिमानिलोजी ।
प्रणमूँ बार हजार, प्रभू त्रिभुवन तिलोजी ॥ २ ॥
मधुकर नो मन मोहियोजी, मालती कुसुम सुवास ।
त्यूँ मुज मन मोह्यो सही, जिन महिमा सुविमास ॥प्रभु०॥ ३ ॥
ज्यूँ पङ्कज सूरज मुखीजी, विकसै सूर्य प्रकाश ।
त्यूँ मुज मनडो गहगहै, सुनि जिन चरित हुलास॥प्रभू०॥ ४ ॥
पपइयो पीउ पीउ करेजी, जान वर्षाऋतु मेह ।
त्यूँ मो मन निसदिन रहै, जिन सुमरन सूँ नेह ॥प्रभू०॥ ५ ॥
काम भोगनी लालसाजी, थिरता न धरे मन्न ।
पिण तुम भजन प्रतापथी, दाझै दुरमति वन्न ॥प्रभु०॥ ६ ॥
भवनिधि पार उतारियेजी, भक्त वच्छल भगवान ।
'विनयचन्दकी' वीनती, थें मानो कृपानिधान ॥ प्रभु० ॥७॥

६—श्री पद्मप्रभु स्तवन

(स्याम कैसे गज का फन्द छुडायो ऐ देशी)

पदम प्रभु पावन नाम तिहारो, पतित उद्धारन हारो ॥टेर॥
जदपि धीमर भील कसाई, अति पापिष्ठ जमारो ।
तदपि जीव हिंसा तज प्रभू भज, पावै भवनिधि पारो ॥पदम॥ १ ॥

गौ ब्राह्मण प्रमदा बालककी, मोठी हत्याच्यारो ।
तेहनो करणहार प्रभू-भजने, होत हत्यासूँ न्यारो ॥पदम॥ २ ॥
वेश्या चुगल चंडाल जुवारी, चोर महा, वट मारो ।
जो इत्यादि ।भजै प्रभु तोने, तो निवृतें संसारो ॥पदम॥ ३ ॥
पाप कराल को पुञ्ज बन्यौ, अति मानो मेरु अकारो ।
ते तुम नाम हुवाशन सेती, सहजा प्रजलत सारो ॥पदम॥ ४ ॥
परम धर्म को मरम महारस, सो तुम नाम उच्चारो ।
या सम मंत्र नहीं कोई दूजो, त्रिभुवन मोहन गारो ॥पदम॥ ५ ॥
तो सुमरण विन इण कलयुग में, अवर न को आधारो ।
मैं वारि जाऊँ तो सुमरन पर, दिन दिन प्रीत बधारो ॥पदम॥ ६ ॥
"सुषमा राणी" को अंगजात तूँ, "श्रीधर" राय कुमारो ।
'बिनयचन्द' कहे नाथ निरञ्जन, जीवन प्राण हमारो ॥पदम०॥७॥

७—श्री सुपार्श्वनाथ-स्तवन

(प्रभुजी दीनदयाल सेवक सरणे आयो ऐदेशी)

"प्रतिष्ट सैन" नरेश्वर को सुत, "पृथवी" तुम महतारी ।
सुगुण सनेही साहिब साँचो, सेवक ने सुखकारी ॥
श्री जिनराज सुपास, पूरो आस हमारी ॥टेर॥ १ ॥
धर्म काम धन मोक्ष इत्यादिक, मन वांछित सुख पूरो ।
बार बार मुझ बिनती येही, भवभव चिंता चूरो ॥श्रीजिन०॥ २ ॥
जगत् शिरोमणि भक्ति तिहारी, कलपवृक्ष सम जाणू ।
पूरणब्रह्म प्रभू परमेश्वर, भवभव तुम्हे पिछाणू ॥श्रीजिन०॥ ३ ॥

हूँ सेवक तूँ साहिब रो, पावन पुरुष विज्ञानी ।
जनम-जनम जित-तिथ जाऊँ तो, पालो प्रीति पुरानी ॥श्रीजिन०॥४॥
तारण-तरण अरु असरण-सरण को, बिरुद इसो तुम सोहे ।
तो सम दीनदयाल जगत मे, इन्द्र नरिन्द्रन को है ॥श्रीजिन०॥ ५ ॥
शम्भु रमण वडो समुद्रो में, शैल सुमेर बिराजै ।
तू ठाकुर त्रिभुवनमें मोटो, भक्ति किया दुख भाजै ॥श्रीजिन०॥ ६ ॥
अगम अगोचर तू अविनाशी, अलप अखंड अरूपी ।
चाहत दरस 'विनयचद' तेरो, सच्चिदानन्द स्वरूपी ॥श्रीजिन०॥ ७ ॥

८—श्री चन्द्रप्रभ-स्तवन

(चौकनी देशी)

जय जय जगत शिरोमणी, हूँ सेवक ने तूँ धणी ।
अब तौसूँ गाढी बणी, प्रभू आशा पूरो हमतणी ॥ टेर ॥
मुझे म्हेर करो, चन्द प्रभू जग जीवन अन्तरजामी ।
भव दु ख हरो, सुणिये अरज हमारी त्रिभुवन स्वामी । जय०॥ १ ॥
"चन्दपुरी" नगरी हती, "महासैन" नामा नरपति ।
राणी "श्रीलखमा' सती, तसु नन्दन तूँ चढती रती॥जय०॥२॥
तूँ सरवज्ञ महाज्ञाता, आतम अनुभव को दाता ।
तो तूठा लहिये साता, प्रभु धन्य २ जगमें तुम ध्याता ॥जय०॥ ३ ॥
शिव सुख प्रार्थना करसूँ उज्जल ध्यान हिये धरसूँ ।
रसना तुम महिमा करसूँ,प्रभु इण विध भवसागरसे तिरसूँ॥जय०॥४॥
चद चकोरन के मन में, गाज अवाज होवे घन में ।
पिय अभिलाषा ज्यों त्रियतनमें,ज्यों वसियो तू मो चितवनमें ५

जो सूनजर साहिब तेरी, तो मानो विनती मेरी ।
काटो करम भरम वेरी,प्रभु पुनःपि नहिं परूँ भव फेरी॥जय०॥ ६ ॥
आतम-ज्ञान दशा जागी, प्रभु तुम से ी लवलागी ।
अन्य देव भ्रमना भागी, 'विनयचंद' तिहारो अनुरागी॥जय०॥७॥

६—श्री पुष्पदन्त-स्तवन

(बुढ़ापो वेरी आविया हो ए देशी)

"काकंदी" नगरी भली हो, "श्री सुग्रीव" नृपाल ।
"रामा" तसु पट रागनी हो, तस सुत परम कृपाल ॥
श्री सुविध जिणेसर वंदिये हो ॥ टेर ॥ १ ॥

त्यागी प्रभुता राजनी हो, लीवो संजम भार ।
निज आतम अनुभव थी हो, पाम्या प्रभु पद अविकार ॥श्री०॥ २ ॥
अष्ट कर्म नाराजवो हो, मोह प्रथम क्षय कीन ।
सुध समकित चारित्रनो हो परम क्षायक गुणलीन ॥श्री०॥ ३ ॥
ज्ञानावरणी दर्शणावरणी हो, अन्तराय कीयो अन्त ।
ज्ञान दरशन बल ये त्रिहूँ हो, प्रगट्या अनन्ता नन्त ॥श्री० ॥ ४ ॥
अव्याबाध सुख पामिया हो, वेदनी करम खपाय ।
अव गाहण अटल लही हो, आयु क्षै करन जिनराय॥श्री०॥ ५ ॥
नाम करम नौ क्षय करी हो, अमूर्तिक कहाय ।
अगुरु लघुपणो अनुभव्यौ हो, गौत्र करम सुकाय ॥श्री०॥ ६ ॥
आठ गुणा कर ओलख्यो हो, जोती रूप भगवंत ।
"विनयचंद" के उरबसो हो, अहोनिश प्रभु पुष्पदंत ॥श्री० ॥७॥

१०—श्री शीतलनाथ-स्तवन

(ि॒दवारी देशी)

"श्रीदृढरथ" नृप पिता, "नंदा" थारी माय ।
रोम-रोम प्रभू मो भणी, सीतल नाम सुहाय ॥
जय जय जिन त्रिभुवन धणी ॥ टेर ॥ १ ॥
करुणानिध करतार, सेव्या सुरतरु जेहवो ।
वाँछित सुख दातार ॥ जय ॥ २ ॥
प्राण पियारो तू प्रभू, पति भरता पति जेम ।
लगन निरतर लगरही, दिनदिन अधिको प्रेम ॥जय०॥ ३ ॥
शीतल चदन नी परें, जपता निश-दिन जाप ।
विषै कषाय न ऊपजे, मेटौ भव-दुख ताप ॥जय०॥ ४ ॥
आरत रुद्र परिणाम थी, उपजै चिन्ता अनेक ।
ते दुख कापो मानसी आपौ अचल विवेक ॥जय०॥ ५ ॥
रोगादिक क्षुधा तृषा, शस्त्र अशस्त्र प्रहार ।
सकल शरीरी दु खहरौ, दिलसुँ विरुद विचार॥जय०॥ ६ ॥
सुप्रसन्न होय शीतल प्रभू, तू आसा विसराम ।
"विनयचद" कहै मो भणी, दीजै मुक्ति मुकाम॥जय० ॥७॥

११—श्री श्रेयांसनाथ-स्तवन

(राग काफी देसी होरी की)

श्री श्रेम जिनन्द सुमररे ॥ टेर ॥
चेतन जाग कल्याण करन को, आन मिल्यो अवसररे ।
शास्त्र प्रमान पिछान प्रभ गुन, मन चचल थिर कररे॥श्री०॥ १ ॥

सास उसास विलास भजन को, दृढ़ विस्वास पकररे ।
अजपाभ्यास प्रकाश हिये बिच, सो सुमरन जिनवररे ॥श्री०॥ २ ॥
कंद्रप क्रोध लोभ मद मच्छर, यह सबही पर हररे ।
सम्यक् दृष्टि सहज सुख प्रगटै, ज्ञान दशा अनुसररे ॥श्री०॥ ३॥
झूँठ प्रपंच जोवन तन धन अरु, सजन सनेही घररे ।
छिनमें छोड़ चले पर भव कूँ, बंध सुभासुभ थिररे ॥श्री०॥ ४ ॥
मानस जनम पदारथ जिनकी, आसा करत अमररे ।
ते पूरब सुकृत कर पायो, धरम-मरम दिल धररे ॥ श्री० ॥ ५ ॥
"विश्नसैन" नृप "विस्नाराणी" को, नंदन तू न बिसररे ।
सहज मिटै अज्ञान अविद्या, मुक्त पंथ पग भररे ॥ श्री० ॥ ६ ॥
तू अविकार बिचार आतम गुन, भव-जंजाल न पररे ।
पुद्गल चाय मिटाय विनयचन्द, तू जिनते न अवररे ॥ श्री० ॥७॥

१२—श्रीवासुपूज्य-स्तवन

(फूथली देह पलक में पलटे ए देशी)

प्रणमूँ बास पूज्य जिन नायक, सदा सहायक तू मेरो ।
बिषम वाट घाट भयथानक, परमाश्रय सरनो तेरो ॥ प्रणमू०॥ १ ॥
खलदल प्रबल दुष्ट अति दारुण, जो चौ तरफ दिये घेरो ।
तौ पिण कृपा तुम्हारी प्रभुजी, अरियन होय प्रगटै चेरो ॥ प्र० ॥ २ ॥
बिकट पहार उजार विचाले, चोर कुपात्र करे हेरो ।
तिण बिरियां करिये तो सुमरण, कोई न छीन सके डेरौ ॥ प्र० ॥ ३ ॥
राजा बादशाह जो कोई कोपे, अति तकरार करे छेरो ।
तदपी तू अनुकूल होय तो, छिन में छुट जाय केरो ॥ प्रण०॥ ४ ॥

राक्षस भूत पिशाच डाकिनी, सॉंकनी भय न आवे नेरौ ।
दुष्ट मुष्ट छल छिद्र न लागे, प्रभ तुम नाम भज्यां गहरो ॥प्र०॥ ५ ॥
विस्फोटक कुष्टादिक। सङ्कट, रोग असाय मिटे देहरो ।
विप प्यालो अमृत होय प्रगमें, जो विश्वास जिनद केरो ॥प्र०॥ ६ ॥
मात 'जया' 'वसु' नृप के नन्दन, तत्व जथारथ वुध प्रेरो ।
वे कर जोरि विनयचद विनवे, वेग मिटे मुझ भव फेरो ॥ प्रण०॥७॥

१३—श्रीविमलनाथ-स्तवन

(अहो शिवपुर नगर सुहावणो ए देशी)

विमल जिनेश्वर सेविये, थारी वुध निर्मल हो जायरे जीवां ।
विपय-विकार विसार ने, तूँ मोहनी करम खपाय रे ।
जीवा विमल जिनेश्वर सेविये ॥ १ ॥

सूक्षम साधारण पणे, परतेक वनस्पती मायरे जीवा ।
छेदन भेदन तेमही, मर-मर ऊपज्यो तिण कायरे ॥जी०॥ २ ॥
काल अनत तिहागम्यो तेहना दुख आगम थी सँभालरे।
पृथ्वी अप्प तेउ वायु में, रह्यो असख्या तो कालरे ॥जी०॥ ३ ॥
एकेन्द्री सूँ बेंद्री थयो, पुन्याई अनती वृधरे जीवा ।
सन्नीपचेंद्री लगें पुनरध्या, अनतानत प्रसिद्ध रे॥जीवा॥ वि०॥ ४॥
देव नरक तिरयच में, अथवा मानव भवनीचरे जीवा ।
दीन पणे दुख भोगव्या, इण पर चारों गति वीचरे ॥जी०॥ ५ ॥
अबके उत्तम कुल मिलगे, भेटया उत्तम गुरू साधुरे जीवा ।
सुण जिन वचन सनेह से, समकित व्रत शुद्ध आराधरे ॥जी०॥ ६ ॥
पृथ्वीपति 'कृतिभानु' को, 'सामाराणी' को कुमाररे जीवा ।
"विनयचद" कहे ते प्रभू, सिर सेहरो हिवडारो हाररे ॥जी०॥७॥

१४—श्रीअनन्तनाथ-स्तवन

(वेगा पधारोरे म्हेल थी एदेशी)

अनंत जिनेश्वर नित नमो, अद्भुत जोत अलेख ।
ना कहिये ना देखिये, जाके रूप न रेख ॥अनंत॥ १ ॥
सुक्षम थी सूक्षम प्रभू, चिदानंद चिद्रूप ।
पवन शब्द आकाशथी, सुक्षम ज्ञान सरूप ॥अनंत॥ २ ॥
सकल पदारथ चिन्तवूं, जेजे सुक्षम जोय ।
तिणथी तू सूक्षम महा, तो सम अवरन कोय ॥अनंत॥ ३ ॥
कवि पंडित कह-कह थके, आगम अर्थ विचार ।
तौ पिण तुम अनुभव तिको, न सके रसना उचार ॥अनंत॥ ४ ॥
पभणे श्रीमुख सरस्वती, देवी आपो आप ।
काह न सके प्रभू तुम सत्ता, अलख अजपा जाप ॥अनंत॥ ५ ॥
मन बुध वाणी तो विषे, पहुंचे नहीं लगार ।
साक्षी लोकालोकनो, निरविकल्प निराकार ॥अनंत॥ ६ ॥
मातु 'सुजसा' 'सिंहरथ' पिता, तासु सुत 'अनंत' जिनंद ।
"बिनयचंद" अब ओलख्यो, साहिब सहजानन्द ॥अनंत॥ ७ ॥

१५—श्री धर्मनाथ-स्तवन

(आज नहेजोरे दीसै नाहलो एदेशी)

धरम जिनेश्वर मुज हिवडै बसो, प्यारो प्राण समान ।
कबहूँ न बिसरूं हो चितारूं सही, सदा अखंडित ध्यान ॥ध०॥ १ ॥
ज्यूं पनिहारी कुम्भ न बीसरे, नट वो वरित निदान ।
पलक न विसरे हो पदमनिपियु भणी, चकवी न विसरे भान ॥ध०॥

ज्यू लोभी मन धनकी लाल्सा, भोगी के मन भोग।
रोगी के मन माने औषधी, जोगी के मन जोग ॥ध०॥ ३ ॥
इण पर लागी हो पूरण प्रीतडी, जाव जीव परियंत।
भव-भव चाहूँ हो न पडे आतरो, भय भजन भगवत ॥ध०॥ ४ ॥
काम क्रोध मद मच्छर लोभ थी, कपटी कुटिल कठोर।
इत्यादिक अवगुण कर हूँ भर्यो, उदय कर्मके जोर ॥ध०॥ ५ ॥
तेज प्रताप तुमारो प्रगटै, मुज हिवडा में आय।
तो हूँ आतम निज गुण सभालने अनत बली कहियाय ॥ध०॥ ६ ॥
'भानू' नृप 'सुव्रत्ता' जननी तणो, अङ्ग जाति अभिराम।
विनयचद ने वल्लभ तू प्रभू, सुध चेतन गुण धाम ॥ध०॥ ७ ॥

१६—श्री शातिनाथ-स्तवन

(प्रभूजी पधारो हो नगरी हमतणी एदेशी)

"विश्व सैन" नृप "अचला" पटरानी ॥
तासु सुत कुल 'सणगार-हो सोभागी।
जनमता शान्ति करी निज देसमें ॥
मरी मार निवार हो सोभागी।
शान्ति जिनेश्वर साहिब सौलमा ॥ १ ॥
शांति दायक तुम नाम हो सोभागी।
तन मन वचन सुध कर ध्यावता ॥
पूरे सघली आम हो सोभागी ॥ २ ॥
विघन न व्यापे तुम सुमरन किया।
नासै दारिद्र दुःख हो, सोभागी ॥

अष्ट सिद्धि नव निद्धि पग पग मिलै ।
प्रगटै सगला सुक्ख हो, सौभागी ॥ ३ ॥
जेहनै सहायक शान्ति जिनंद तूं ।
तेहनै कमीय न काय हो सोभागी ॥
जे जे कारज मन में तेवढ़ै ।
तेन्ते सफला थाय हो, सोभागी ॥ ४ ॥
दूर दिसावर देश प्रदेश में ।
भटके भोला लोक हो, सोभागी ॥
सानिधकारी सुमरन आपरो ।
सहज मिटे सहू सोक हो ॥ सोभागी ॥ ५ ॥
आगम - साख सुणी छै एहवी ।
जो जिण-सेवक होय हो ॥ सोभागी ॥
तेहनी आसा पूरै देवता ।
चौसठ इन्द्रादिक सोय हो । सोभागी ॥ ६ ॥
भव-भव अन्तरयामी तुम प्रभू ।
हमने छै आधार हो ॥ सोभागी ॥
बेकर जोड़ "विनयचंद" विनवै ।
आपौ सुख श्री कार हो ॥ सोभागी ॥ ७ ॥

१७—श्री कुन्थूनाथ-स्तवन

(रेखता)

कुंथ जिनराज तूं ऐसो, नहीं कोई देवतूँ जैसो ।
त्रिलोक नाथतूं कहिये, हमारी बांह दृढ़ गहिये ॥ कुंथ ॥ १ ॥

भवोदधि डूबतो तारो, कृपानिधि आसरो थारो।
भरोसा आपका भारी विचारो विरुद उपकारी॥ कुंथ०॥ २॥

उमाहो मिलन को तोसे, न राखो आतरो मोसे।
जैसी सिद्ध अवस्था तेरी, तैसी चेतन्यता मेरी॥ कुंथ०॥ ३॥

करम भ्रम जाल को दपट्यौ, विषय सुख ममन में लपट्यौ।
भ्रम्यो हूँ चहूँ गति माहीं, उदेकर्म भ्रम को छाँही॥कुंथ०॥ ४॥

उदय को जोर है जोलूं न छूटै विषय सुख तौलूँ।
कृपागुरुदेव की पाई, निजातम भावना भाई॥ कुंथ०॥ ५॥

अजब अनुभूति उरजागी, सुरति निज स्वरूप में लागी।
तुम्हि हम एकता जाणू—, द्वैत भ्रम-कल्पना मानू॥ कुंथ॥ ६॥

"श्री देवी" "सुर" नृप नन्दा, अहो सरवज्ञ सुख कन्दा।
"विनयचन्द" लीन तुम गुन में, न व्यापै अविद्या मन मे॥कुंथ॥७॥

१८—श्री अरहनाथ-स्तवन

(अरणी गिरानी एदेशी)

अरहनाथ अविनामी शिव सुख लीधौ,
विमल विज्ञान विलासी। साहि सीधौ०॥ १॥

तू चेतन भज अरह नाथने ते प्रभु त्रिभुवन राय।
तात 'सुदर्शन' 'देवी' माता, तेहनों पुत्र कहाय साहिब सीधौ॥२॥

कोई जतन करता नहीं पामें, एहवो मोटी माम।
ते जिन भक्ति करी ने लहिये, मुक्तिअमोलक ठाम॥ सा०॥ ३॥

समकित सहित कियां जिन भगती, ज्ञानदरसन चारित्र।
तप बीरज उपयोग तिहारा प्रगटे परम पवित्र ॥ सा० ॥ ४ ॥
सो उपयोग सरूप चिदानंद जिनवर ने तू एक।
द्वैत अविद्या विभ्रम मेटौ वाधै शुद्ध विवेक ॥ सा० ॥ ५ ॥
अलख अरूप अखण्डित अविचल, अगम अगोचर आप।
निरविकल्प निकलंक निरंजन, अद्भुत जोति अमाप ॥ सा० ॥ ६ ॥
ओलख अनुभव अमृत वाको, प्रेम सहित रस पीजै।
हूँ-तूँ छोड़ "विनयचन्द" अंतस, आतम-राम रमीजे ॥ सा० ॥७॥

१६—श्री मल्लिनाथ-स्तवन

(लावणी)

मल्लि जिन बाल ब्रह्मचारी।
"कुम्भ" पिता "परभावती" मइया तिनकी कुँवारी ॥टेर॥
मानी कूख कंदरा मांही उपना अवतारी।
मालती कुसुम-मालनी वांछा जननी उरधारी ॥ म० ॥ १ ॥
तिणथी नाम मल्लि जिन थाप्यो, त्रिभुवन प्रिय कारी।
अद्भुत चरित तुम्हारो प्रभुजी वेद धर्यो नारी ॥ म० ॥ २ ॥
परणन काज जान सज आए, भूपति छैः भारी।
मिथिला पुरि घेरि चौतरफा, सेना विस्तारी ॥ म० ॥ ३ ॥
राजा "कुम्भ" प्रकाशी तुमपे, बीती विधि सारी।
छहुं नृप जान सजी तो परणन, आया अहंकारी ॥ म० ॥ ४ ॥
श्रीमुख धीरप दीधि पिताने, राखो हुशियारी।
पुतली एक रची निज आकृति, थोथी ढकणारी ॥ म० ॥ ५ ॥

भोजन सरस भरी सा पुतली, श्रीजिण सिणगारी ।
भूपति छहूँ बुलाय मंदिर, विच बहु दिना पारी ॥म०॥ ६॥
पुतली देख छहूँ नृप मोह्या, अवसर विचारी ।
ढांक उघार लीनी पुतली को, भवक्यो अन्न भारी ॥म०॥ ७॥
दुसह दुगन्ध सही न जावे, ऊठ्या नृपहारी ।
तब उपदेश दियो श्रीमुख से, मोह दशा टारी ॥म०॥ ८॥
महा असार उदारीक देही, पुतली इव प्यारी ।
संग किया पटके भव-दुःख में, नारि नरक वारी ॥म०॥ ९॥
नृप छहूँ प्रति बोधे मुनि होय, सिधगति सभारी ।
"विनैचंद" चाहत भव भव में, भक्ति प्रभू थारी ॥म०॥१०॥

२०—श्री मुनि सुव्रतनाथ-स्तवन

(चेतरे चेतरे मानवी ऐदेशी)

श्री मुनि सुव्रत साहिबा, दीनदयाल देवाँ तणा देव कै ।
तारण तरण प्रभू तो भणी, उज्वल चित्त सुमरू नितमेवकै ॥१॥
हूँ अपराधी अनादिको, जनम-जनम गुना किया भरपूर कै ।
लूटिया प्राण छै कायना, सेविया पाप अठार करू रकै ॥२॥
पूरब अशुभ कर्त्तव्यता ते, हमनी प्रभू तुम न विचारकै ।
अधम उधारण विरुद्ध छै,सरण आयो अब कीजिये सारकै ॥३॥
किंचित पुन्यपर भावथी,इण भव ओलिख्यो श्रीजिन धर्मकै ।
निवर्तू नरक निगोद थी, एवही अनुग्रह करो पर ब्रह्मकै ॥४॥
साधुपणो नहिं सग्रह्यो, श्रावक व्रत न किया अगीकारकै ।
आदरया तो न अराधिया, तेहथी रुलियो हूँ अनत ससारकै ॥५॥

अब समकित व्रत आदर्‌‌या, तदपि अराधक उतरूं भव पारकै ।
जनम जीतब सफलौ हुवै, इण पर विनवूं वार हजारकै ॥६॥
"सुमति" नराधिप तुम पिता, धन २ श्री "पदमावती" मायकै ।
तसु सुत त्रिभुवन तिलक तूं, वंदत "विनैचंद" सीस नवायकै ॥७॥

२१—श्री नमिनाथ-स्तवन

(सुणियोरे बाला कुटिल मंझारी तोता ले गई)

"विजय" सैन नृप "विप्राराणी", नेमीनाथ जिन जायो ।
चौसठ इन्द्र कियो मिल उत्सव, सुर नर आनंद पायोरे ॥
सुज्ञानी जीवा भजले जिन इक बीसमों ॥ टेर ॥ १ ॥

भजन किया भव-भवना दुष्कृत, दुक्ख दुभाग्य मिट जावे ।
काम, क्रोध, मद, मच्छर, त्रिसना, दुरमति निकट न आवैरे ॥सु०॥२॥

जीवादिक नव तत्व हिये घर, हेय ज्ञेय समझीजे ।
तजी उपादेय ओलखने, समकित निरमल कीजैरे ॥सु०॥ ३ ॥

जीव, अजीव, बंध, एतीनूं, ज्ञेय जथारथ जानौ ।
पुन्य पाप आश्रव पर हरिये, हेय पदारथ मानों रे ॥सु०॥ ४ ॥

संबर मोक्ष निर्जरा निज गुण, उपादेय आदरिये ।
कारण कारज समज भली विध, भिन्न-भिन निरणो करियेरे ॥सु०॥५॥

कारण ज्ञान सरूप जिवको, कारज क्रिया पसारो ।
दोनूं को साखी सुध अनुभव, आपो खाज तिहारो रे ॥सु०॥ ६ ॥

तू सो प्रभू प्रभू सो तू है, द्वैत कलपना मेटो ।
सत्‌चित आनंद विनैचंद, परमातम पद भेटोरे ॥सुज्ञानी०॥ ७ ॥

२२—श्री नेमिनाथ-स्तवन

(नगरी खूब बणी छै जी एदेशी)

"समुद्र" विजय सुत श्री नेमीश्वर, जादव कुल को टीको ।
रत्न कुख धरणी "सिवा देवी", जेहनो नंदन नीको ॥
श्रीजिनमोहन गारो छै, जीवन प्राण हमारो छै ॥ टेर॥श्री०॥ १ ॥
सुन पुकार पशु की करुणा कर, जानिजगत् सुख फीको ।
नव भव नेह तज्यो जोबन में, उग्रसैन नृप धीको । श्री०॥ २ ॥
सहस्र पुरुष सों सजम लीधो, प्रभुजी पर उपकारी ।
धन धन नेम राजुलकी जोडी, महा बाल ब्रह्मचारी ॥श्री०॥ ३ ॥
बोधानन्द सरूपानन्द में, चित एकाग्र लगायो ।
आतम-अनुभव दशा अभ्यासी, शुक्ल ध्यान जिन ध्यायो ॥श्री०॥ ४ ॥
पूर्णानन्द केवली प्रगटे, परमानन्द पद पायो ।
अष्टकर्म छेदी अलवेसर, सहजानन्द समायो ॥श्री०॥ ५ ॥
नित्यानन्द निराश्रय निश्चय, निर्विकार निर्वाणी ।
निरांतक निरलेप निरामय, निराकार वरनाणी ॥श्री०॥ ६ ॥
एवहो ध्यान समाधि संयुक्त, श्री नेमीश्वर स्वामी ।
पूरण कृपा "जिनेचन्द" प्रभू की, अबवे मोलभपामी ॥श्री०॥७॥

२३—श्री पार्श्वनाथ-स्तवन

(जीवरे श्री---गो कर सग)

"अस्वसैन" नृप कुल तिलोरे, "वामा" देवी नौ नन्द ।
चिंतामणि चित्त में बसेरे दूर टले दुख द्वन्द ॥
जीवरे तू पार्श्व जिनेश्वर वन्द ॥ टेर ॥ १ ॥

जड़ चेतन मिश्रित पणैरे, करम सुभाशुभ थाय ।
ते विभ्रम जग कलपनारे, आतम अनुभव न्याय ॥जीवरे०॥ २ ॥
वैहमी भय माने जथारे, सूने घर वैताल ।
त्यूं मूरख आतम विषरे, मान्यो जग भ्रम जाल ॥जीवरे०॥ ३ ॥
सरप अंधारै रासडीरे, रूपो सीप सम्कार ।
मृग तृषना अंबू मृषारे, त्यूं आतम संसार ॥जीवरे॥ ४ ॥
अग्नि विषै ज्यों मणी नहीं रे, मणी में अग्नि न होय ।
सुपनै की संपति नहीं त्युं, आगम में जग जोय ॥जीवरे०॥ ५ ॥
बांझ पुत्र जनमे नहीं रे, सींग शशै सिर नाहीं ।
कुसुम न लागै व्योम मेंरे, ज्यूं जग आतम मांहि ॥जीवरे०॥ ६ ॥
अमर अजोनी आतमारे, हूँ निश्चै तिहुँ काल ।
"विनैचंद" अनुभव जगीरे, तू निज रूप सम्हाल ॥जीवरे०॥ ७ ॥

२४—श्री महावीर-स्तवन

(श्रीनवकार जपो मन रंगे एदेशी)

धन धन जनक 'सिद्धारथ' राजा धन, 'त्रसलादे' मातरे प्राणी ।
ज्यां सुत जायो गोद खिलायो, 'वर्धमान' विख्यातरे प्राणी ॥
श्री महावीर नमो वरनाणी, शासन जेहनो जाणरे प्राणी ॥ १ ॥
प्रवचन सार विचार हिया में, कीजै अरथ प्रमाणरे ॥प्रा०॥श्री०॥ २ ॥
सूत्र विनय आचार तपस्या, चार कार समाधिरे प्राणी ।
ते करिये भव सागर तरिये, आतम भाव अराधिरे प्राणी ॥श्री०॥ ३ ॥
ज्यों कंचन तिहुँ काल कहीजै, भूषण नाम अनेकरे प्रा० ।
त्यों जगजीव चराचर जोनी, है चेतन गुन एकरे प्राणी ॥श्री॥ ४ ॥

जाणो आप विषै थिर आतम सोहं हंस कहायरे प्रा० ।
केवल ब्रह्म पदारथ परिचय, पुद्गल भरम मिटायरे प्राणी ।।श्री०।। ५ ।।

शब्द रूप रस गंध न जामें, ना सपरस तप छांहरे प्रा० ।
तिमर उद्योत प्रभा कछु नाहीं, आतम अनुभव माहिरे प्रा०।।श्री०।। ६ ।।

सुख दुःख जीवन मरन अवस्था, ऐ दस प्राण सगारते प्रा० ।
इनथी भिन्न विनैचंद रहिये, ज्यों जलमें जल मातरे प्रा०।।श्री०।। ७ ।

॥ कलश ॥

चौबीस तीरथ नाथ कीरति, गावतामन गह गहै ।
कुमट गोकुलचन्द नन्दन, 'विनयचन्द' इणपर कहै ॥
उपदेश पूज्य हमीर मुनिको, तत्व निज उरमें धरी ।
उगणीस सो छै के छमच्छर, चतुर्विंशति स्तुति इम करी ॥

भजन

जीवन गत देखो अपना रूप ।
यह संसार न भिन्न तुम्हारा, भूलो मती स्वरूप ॥
जड़-वस्तु की रचना यह जग, तुम चैतन्य अनूप ।
नहीं तुम्हारी इसकी ममता, ज्यों छाया अरु धूप ॥
जग की सब सम्पति ऐसी है, ज्यों गोबर के धूप ।
सार न लागत बिगड़त सुधरत, [illegible] रङ्क, [illegible] भूप ॥
मानुष जनम न खोवो अकारथ, पड़ि विषयन के कूप ।
धर्म सार रवि [illegible] फूट को, [illegible] ज्यों धूप ॥
मोह-जाल पड़ि [illegible] को, [illegible] तुम भूप ।
[illegible] पर [illegible] को मरघटकर, [illegible] धर्म को भूप ॥

भजन

धर्म सा नहीं कोई बलवान, धर्म में होती शक्ति महान ।
कैसा भी हो कष्ट धैर्य से, करे धर्म का ध्यान ॥
कहां गये वे कष्ट नहीं है, यह भी पड़ता जान ॥ १ ॥
भव सागर के घोर दुःख से, जब घबराते प्राण ।
ऐसे समय में एक धर्म ही जीव को देता त्राण ॥ २ ॥
लेना देना पुत्र रोग दुःख, मान और अपमान ।
ये सब चिंतामिट जावे यदि, करो धर्म सम्मान ॥ ३ ॥
धर्म सामने उपाय दूजे हैं, सब धूर समान ।
ऐसा समझ धर्म को "दीन्दित" हृदय में दो स्थान ॥ ४ ॥

राग टोडी-द्रुत एक ताल (चार ताल)

दीन को दयालु दानि दूसरो न कोऊ ।
जासों दीनता कहौं, हौं देखौं दीन सोऊ ॥ १ ॥
सुर नर मुनि असुर नाग, साहिब तो घनेरे ।
तौलौं, जौलौं रावरे न नेकु नयन फेरे ॥ २ ॥
त्रिभुवन तिहुँ काल विदित वदति वेद चारी ।
आपि अंत मध्य राम ! साहिबी तिहारी ॥ ३ ॥
तोहि मांगि माँगनो न मांगनो कहायो ।
सुनि सुभाउ सील सुजस जाचन जन आयो ॥ ४ ॥
पाहन, पसु विदप, विहँग अपने कर लीन्हें ।
महाराज दसरथ के ? रंक राम कीन्हें ॥ ५ ॥

तू गरीब को निवाज, हौं गरीब तेरो ।
बारक कहिये कृपालु ? तुलसीदास मेरो ॥ ६ ॥

भजन

सन्त को लोमत छोटा जान, सन्त ही से होते भगवान ।
महाव्रतों को दुःख सहपालें तनिक न आरत ध्यान ।
स्वश्रम से जो प्राप्त किया वह तुम्हें सुनावे ज्ञान ॥ १ ॥
पहले तुमको नहीं सुनाते, जब लें खुद पहचान ।
निज आतम से अनुभव करके देते ज्ञान का दान ॥ २ ॥
सन्त जनों की सेवा करके, दान मान सम्मान ।
'दीक्षित' क्षुद्र जीव भी करते, निज आतम कल्याण ॥ ३ ॥

राग कोशिया–तीन ताल

निंदक बाबा वीर हमारा, बिन ही कौड़ी वहै बिचारा ॥ ध्रु० ॥
कोटि कर्म के कल्मष काटै, काज सँवारे बिनही साटै ॥ १ ॥
आप डूबै और को तारे, ऐसा प्रीतम पार उतारे ॥ २ ॥
जुग जुग जीवो निंदक मोरा, रामदेव ? तुम करौ निहोरा ॥ ३ ॥
निंदक मेरा पर उपकारी, 'दादू' निंदा करे हमारी ॥ ४ ॥

राग गज़ल–पहाड़ी धुन

समझ देख मन मीत पियारे आसिक होकर सोना क्यारे ।
रूखा सूखा गम का टुकड़ा फीका और सलोना क्यारे ॥
पाया हो सो दे ले प्यारे पाय पाय फिर खोना क्यारे ।
जिन आँखिन में नींद घनेरी तकिया और बिछौना क्यारे ॥
कहै 'कबीर' सुनो भाई साधो सीस दिया तब रोना क्यारे ॥

राग भैरवी, पंजावी ठेका—तीन ताल

सुनेरी मैंने निर्बल के बल राम ।
पिछली साख भरूं संतन की आडे सँवारे काम ॥
जब लग गज बल अपनो बरत्यो नेक सरो नहिं काम ।
निर्बल के बल राम पुकारयो आये आधे नाम ॥
द्रुपद सुता निर्बल भई तादिन गह लाये निज धाम ।
दुःशासन की भुजा थकित भई वसन रूप भये श्याम ॥
अप बल तप बल और बाहुबल चौथा है बल दाम ।
'सूर' किशोर कृपा से सब बल हारे को हरिनाम ॥

राग दस—दादरा

तू दयालु, दीन हौं तू दानि, हौं, भिखारी ।
हों प्रसिद्ध पातकी, तू पाप पुञ्जहारी ॥ १ ॥
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मोसो ।
मो समान आरत नहिं, आरत हर तोसो ॥ २ ॥
ब्रह्म तू हौं जीव, तू ठाकुर हौं चेरो ।
तात, मात, गुरु, सखा तू, सब विधि हितू मेरो ॥ ३ ॥
तोहिं मोहि नाते अनेक मानिये जो भावै ।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु चरन सरन पावे ॥ ४ ॥

मेरी भावना

जिसने राग द्वेष कामादिक जीते, सब जग जान लिया ।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया ॥
बुद्ध बीर जिन हरिहर, ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो ।
भक्त भाव से प्रेरित हो, यह चित्त उसी में लीन रहो ॥

विषयों की आशा नहीं जिनके, साम्य भाव धन रखते हैं ।
निज पर के हित साधन में जो, निशिदिन तत्पर रहते हैं ॥
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या बिना खेद जो करते हैं ।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुःख समूह को हरते हैं ॥
रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे ।
उन्हीं जैसी चर्या में यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे ॥
नहीं सताऊँ किसी जीव को, झूठ कभी नहीं कहा करूँ ।
परधन वनिता पर न लुभाऊँ, सन्तोषा मृत पिया करूँ ॥
अहंकार का भाव न रक्खूँ, नहीं किसी पर क्रोध करूँ ।
देख दूसरों की बढ़ती को कभी न ईर्ष्या भाव धरूँ ॥
रहे भावना ऐसी, सरल सत्य व्यवहार करूँ ।
बने जहाँ तक इस जीवन में औरों का उपकार करूँ ॥
मैत्री भाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे ।
दीन दुःखी जीवों पर मेरे उर से करुणा स्रोत बहे ॥
दुर्जन-क्रूर-कुमार्ग-रतों पर क्षोभ न मेरे को आवे ।
साम्य भाव रखूं मैं उन पर ऐसी परिणति हो जावे ॥
गुणी जनों को देख हृदय में मेरे प्रेम उमड आवे ।
बने जहाँ तक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावे ॥
होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं द्रोह न मेरे उर आवे ।
गुण ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे ॥
कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे ।
लाखों वर्षों तक जीऊँ या मृत्यु आज ही आ जावे ॥
अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवे ।
तो भी न्याय मार्ग से मेरा कभी न पद डिगने पावे ॥

होकर सुख में मग्न न फूलें दुःख में कभी न घबरावे।
पर्वत नहीं स्मशान भयानक अटवी से नहीं, भय खावे॥
रहे अडोल अकम्प निरंतर, यह मन दृढ़तर बन जावे।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग में सहन शीलता दिख लावे॥
सुखी रहें सब जीव जगत के कोई कभी न घबराये॥
वैर पाप अभिमान छोड़ जग नित्य नये मंगल गावे।
घर घर चर्चा रहे धर्म की दुष्कृत दुष्कर हो जावे॥
ज्ञान चरित उन्नत कर अपना मनुज जन्म फल सब पावें।
ईति भीति व्यापे नहीं जग में वृष्टि समय पर हुआ करे॥
धर्म निष्ठ होकर राज भी न्याय प्रजा का किया करे।
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करे॥
परम अहिंसा धर्म जगत में फैल सर्व हित किया करे।
फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर पर रहा करे।
अप्रिय, कटुक, कठोर शब्द नहिं, कोई मुख से कहा करे॥
बनकर सब "युग-बीर" हृदय से देशोन्नति रत रहा करे।
वस्तू स्वरूप विचार खुशी से सब दुःख संकट सहा करे॥

राग बिहाग-तीन ताल

नाम जपन क्यों छोड़ दिया ?

क्रोध न छोड़ा, झूठ न छोड़ा, सत्य वचन क्यों छोड़ दिया॥ध्रु०॥
झूठे जाल में दिल ललचा कर, असल वतन क्यों छोड़ दिया ?
कोड़ी को तो खूब सम्हाला लाल रतन क्यों छोड़ दिया ?॥१॥
जहि सुमिरन ते अति सुख पावे, सो सुमिरन क्यों छोड़ दिया ?
'खालस' इक भगवान् भरोसे, तन, मन, धन, क्यों न छोड़ दिया॥२॥

राग मल्हार-तीन ताल

साधो मन का मान त्यागो ।
काम क्रोध संगत दुर्जन की, तातें अहनिस भागो ॥ध्रु०॥
सुख दु:ख दोनों समकरि जाने, और मान अपमाना ।
हर्ष शोक ते रहै अतीता, तिन जग तत्व पिछाना ॥ १ ॥
अस्तुति निंदा दोऊ त्यागी, खोजै पद निरवाना ।
जन नानक यह खेल कठिन है कोऊ गुरुमुख जाना ॥ २ ॥

राग खमाज धुमाली

भजेरे भइया राम जिनद हरी ॥ध्रुव०॥
जप तप साधन कछु नहिं लागत, खरचत नहिं गठरी ॥ १ ॥
संतत संपत सुख के कारण, जासे भूल परी ॥ २ ॥
कहत कबीरा जा मुख राम नहिं, वो मुख धूल भरी ॥ ३ ॥

राग पीलू दीपचन्दी

इस तन धन की कौन बड़ाई देखते नैनों में मिट्टी मिलाई ॥ध्रु०॥
अपने खातीर महल बनाया, आपहि जाकर जंगल सोया ॥ १ ॥
हाड जले जैसे लकडी की मोली, बाल जले जैसे घास की पोली ॥ २ ॥
कहत कबीरा सुन मेरे गुनिया, आप मुवे पिछे डुब गई दुनिया ॥ ३ ॥

राग धनाश्री—तीन ताल

अब हम अमर भये, न मरेंगे,
या कारण मिथ्या तजियो तज क्यों कर देह धरेंगे ? अब॥१॥
राग दोष जग बन्ध करत है इनको नाश करेंगे,
मर्यो अनंत काल ते प्राणी, सो हम काल हरेंगे ॥अब०॥२॥

देह विनाशी हूँ अविनाशी, अपनी गति पकरेंगे ।
नासी नासी हम थिरवासी, चोखे व्है निसरेंगे ॥अब०॥३॥
मन्यो अनंत वार बिन समज्यो, अब सुख दुःख विसरेंगे ।
आनन्दघन निपट निकट अक्षर दो, नहीं सुमरे सो सुमरेंगे॥४॥

राग केदार—तीन ताल

राम कहो रहमान कहो कोउ, कान कहो महादेवरी ।
पारसनाथ कहो कोउ ब्रह्मा, सकल ब्रह्म स्वयमेवरी ॥राम०॥१॥

भाजन भेद कहावत नाना, एक मृत्तिका रूपरी ।
तैसे खण्ड कल्पना रोपित, आप अखंड सरूपरी ॥ राम० ॥२॥

निज पद रमे राम सो कहिये, रहिम करे रहिमानरी ।
कर्षे करम कान सो कहिये, महादेव निर्वाणरी ॥ राम० ॥३॥

परसे रूप पारस सो कहिये, ब्रह्म चिन्है सौ ब्रह्मरी ।
इह विधि साधो आप आनन्द धन चेतनमय निकर्मरी ॥राम०॥४॥

राग तिलक कामोद—तीन ताल

पायोजी मैंने राम-रतन धन पायो ॥ टेक ॥

वस्तु अमोलक दी मेरे सतगुरु, किरपा कर अपनायो ॥ १ ॥
जनम जनम की पूँजी पाई, जग में सभी खोवायो ॥ २ ॥
खरचै न खूटै, वाको चोर न लूटे, दिन दिन बढ़त सवायो ॥ ३ ॥
सत की नाव, खेवटिया सतगुरु, भवसागर तर आयो ॥ ४ ॥
"मीरा" के प्रभु, गिरधर नागर, हरख हरख जस गायो ॥ ५ ॥

राग खमाज—धुमाली

वैष्णव (श्रावक) जन तो तेने कहिये जे पीड़ पराई जाणे रे,
परदु:खे उपकार करे तो ये, मन अभिमान न आणे रे ॥ध्रु०॥
सकल लोकमा सहुने वदे, निन्दा न करे केनी रे,
वाच काछ मन निश्चल राखे, धन धन जननी ते नीरे ॥ १ ॥
समदृष्टि ने तृष्णा त्यागी, परस्त्री जेने मातरे,
जिव्हा।थकी असत्य न बोले, परधन नव झाले हाथ रे ॥ २ ॥
मोह माया व्यापे नहि जेने, दृढ वैराग्य जेना मनमाँ रे,
राम नाम शुँ ताली लागी, सकल तीरथ तेना तन माँ रे ॥ ३ ॥
वण लोभी ने कपट रहित छे, काम क्रोध निवार्या रे,
भणे 'नरसैंयो' तेनुँ दरसण करता, कुल एको तेरे तार्यारे ॥ ४ ॥

राग छाया खमाज तीन ताल

सद्गुरु शरण विना अज्ञानतिमिर टल से नहिं रे ।
जन्म मरण देनारु बीज खरु वल से नहिं रे ॥ध्रु०॥
प्रेमामृत वच पान बिना, साचा खाटा ना भान विना ।
गाठ हृदयनी, ज्ञान विना गल से नहि रे ॥ १ ॥
शास्त्र ज्ञान सदा समारे, तन मन इंद्रिय तत्पर वारे ।
वगर विचारे रे वलमा सुख रल से नहि रे ॥ २ ॥
सत्व नथी तारा मरामा, सुझ समज नरता सारामा ।
सेवक सुत दारामा, दिन वल से नहि रे ॥ ३ ॥
"केशव" प्रभुनी करता सेवा परमानंद बतावे तेवा ।
शोध बिना सज्जन एवा मलशे नहि रे ॥ ४ ॥

अभिलाषा

नहीं चाहिये मुझे राज्य पद, अथवा भौतिक विभव विलास ।
कष्टो पार्जित प्रजाग्रास, हरने से उत्तम है उपवास ॥
होकर धन मद मत्त करूंगा, मैं लोगों पर अत्याचार ।
सुन न सकूंगा प्रजावृन्द की, हृदय विदारक हाहाकार ॥
राज मार्ग से दूर किसी, एकन्त शान्त खेरे के पास ।
पावन पर्ण कुटि में चाहता, मैं अपना स्वच्छन्द निवास ॥
काव्य और अध्यातम विषय के, चुने ग्रन्थ दो चार अनूप ।
हों यदि मेरे निकट बनूं तो, मैं तो फिर भूपों का भूप ॥
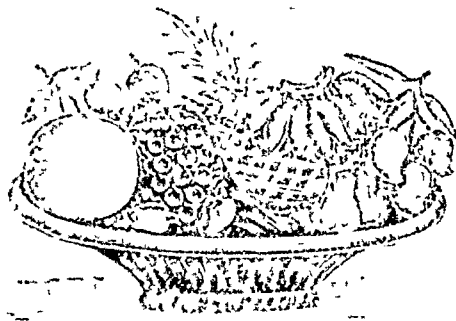
जिन-भक्ति

लेखक — सूर्यभानु डॉगी

प्रकाशक —

मूथा सिम्भूमल गंगाराम, चलूंदा

(मुहता छगनमल)

प्रथमावृत्ति २००० | मूल्य | वीर स २४६२
वि स १९९२

ॐ

भूमिका

इस ससार मे सगीत का माहात्म्य कितना अधिक है, यह अधिक कहने की आवश्यकता नहीं 'सगीत पचमो वेद' इससे यह स्पष्ट होता है कि हिन्दुओं के परम पुनीत-वेदों के समान सगीत का भी स्थान है। सगीत आध्यात्मिक रसास्वादन करानेवाली, शोक पूर्ण हृदयों को प्रफुल्लित करनेवाली कायरो की कायरता को दूर करके घोर सग्राम करानेवाली और जड मे चेतन्य का दर्शन करानेवाली एक विलक्षण सजीवन चूटी है। दीपक-मल्हार आदि इस के लिये प्रत्यक्ष प्रमाण है कि सगीत प्रकृति के नियमो को भी उलघन करने वाला एक अनुपम जादू है। सगीत शास्त्र विषयक आधुनिक, वैज्ञानिक प्रयोगों से वे गान नृत्य आदि के लिये एकत्रित होने वाले जन समुदाय की अभिरुचि मे यह भी स्पष्ट है कि सगीत का प्रभाव लोकपर कितना अधिक पडता है। 'संगीत भक्ति रस का एक अनुपम साधन है' इससे आकर्षित होकर श्री 'भास्कर जी' ने आधुनिक ढग पर यह जिनेन्द्र देव की भक्ति रची है। उस वीतरागी जिनदेव के अनुपम गुणो का वर्णन वडे २ योगी राज भी नहीं कर पाते तथापि रचियता महोदय ने जिनभक्तो के लिये भक्ति रस प्रकटाने का एक अच्छा साधन उपस्थित किया है।

विनीत-

'माधव' जैन न्यायतीर्थ

प्रधान-अध्यापक

श्री मूथा जैन विद्यालय, नलूदा

॥ ॐ ॥

मेरे शब्द

बड़े आदमी कहते हैं कि पहिले कल्प वृक्ष होते थे, और वे प्राणियों के कष्ट नष्ट करते थे। अब भी कल्प वृक्ष हैं और वे हमारे सब दुःखों को दूरकरते हैं। उनका नाम है—सत्य, शील और सन्तोष आदि। इन वृक्षों को सिंचन करने वाली है "जिन-भक्ति" 'जिन' का अर्थ होता है राग द्वेष को जीतने वाला। और जो राग द्वेष को छोड़कर निष्पक्षता से सब धर्मों का समन्वय करता हुआ किसी एक धर्म पर मोह नहीं करके अर्हो करने योग्य अर्हन्त अर्थात् पूजा करने योग्य पूज्य पुरुष की आराधना करता है वही सच्चा जैन है, जिन भक्त है। उसीको सत्य, शील और शांति के दर्शन हो सकते हैं प्रत्युत जिसके हृदय में पक्षपात, हठाग्रह और राग द्वेषादि जिन-विद्रोही दुर्गुण हैं। उसको कभी चिर शांति प्राप्त नहीं हो सकती—मोक्ष लाभ नहीं हो सकता।

जिनेन्द्र भगवान का यह उपदेश है कि सम्प्रदायों के बिना धर्म नहीं टिक सकता विभिन्न सम्प्रदाय और मत मतान्तर धर्म के साधन हैं। इसीलिये उन्होंने अनेकांत का आविष्कार किया। स्याद्वाद दृष्टि मय विशाल विचारों का प्रचार किया। और सब सम्प्रदायों में एकता ढूंढने का मार्ग बताया। उन्होंने कहा, मैं भी समय समय पर तीर्थंकर बनकर तीर्थ की स्थापना करता हूँ—देश काल, भाव के अनुसार सम्प्रदाय बनाता हूँ। जिस तरह जल को

कोई नहीं बनाता उसी तरह धर्म को भी कोई नहीं बनाता। बनाये जाते हैं तीर्थ, कुए, तालाब, बावड़ी। उसी तरह से बनाये जाते हैं—सम्प्रदाय, पंथ, और मत-मतांतर। सम्प्रदाय, पंथ आदि स्वयं धर्म नहीं हैं। वे धर्म के आधार हैं। इन्हें आवश्यकतानुसार हम बनाते हैं। यह अमूल्य उपदेश देकर भगवान ने सम्प्रदायों के झगड़े नष्ट किये और सब सम्प्रदायों मे अतीत-सनातन-जैन धर्म को स्थापित किया। राग द्वेष से रहित सम्प्रदाय बनाई। अब हमारा परम कर्तव्य है कि उस परमात्मा के भक्त बनें। और यथाशक्ति उनके गुण वर्णन करें। हमारी वाणी में वह शक्ति नहीं कि हम उनकी महिमा गा सकें। परंतु महात्माओं के वचनों के आधार पर जो कुछ कहते हैं उसीसे हमें परमानन्द प्राप्त होता है।

परमात्मा को समझने के लिये सबसे पहिले हमें अपनी दृष्टि अन्तर्मुखी करनी चाहिये। चर्म चक्षुओं को बंद करके अन्दर देखना चाहिये, और उस अचिन्त्य शक्ति का चिंतन करना चाहिये वह शक्ति अरूपी है। दृश्य मान पदार्थों से भिन्न है। जो दिखता है वह आत्मा नहीं, जो देखता है वह आत्मा है। जो सुना जाता है वह आत्मा नहीं। जो सुनता है वह आत्मा है। जो सूँघा जाता है वह आत्मा नहीं, जो सूँघता है वह आत्मा है यहाँ सूँघने वाले सुनने वाले और देखने वाले नाक, कान और आँख आदि इन्द्रियों से मतलब नहीं है। क्योंकि उल्लिखित कार्य आत्मा के हैं। नाक को काट कर हाथ पर रख दिया जाय तो वह सूँघ नहीं सकता। कान को काट कर सड़क पर फेंक दिया जाय तो वह वहाँ पड़ा२ नहीं सुन सकता। आँख को निकाल कर अलग रख दी जाय तो वह देख नहीं सकती। यह समस्त व्यापार करने वाला स्वामी आत्मा है और वह सर्वत्र व्याप्त है। सारे संसार में वही अगम्य शक्ति

जिसने आत्मा का मूल्य नहीं समझा उसी को सामायिक करने मे, एक घडी भर के लिये भी आत्म चिंतन करने मे आलस्य आता है आत्मा की कीमत समझाने के लिये मैं एक छोटीसी बात आप लोगों के सामने रखता हू। हम सब से अधिक कीमती चीज हीरे को समझते हैं। परन्तु एक बात का विचार करें कि यदि हमारे पास नेत्र नहीं हैं तो वह हीरा हमारी नजरों मे तीन कोडी का पत्थर है। इससे यह बात तो सिद्ध हुई कि उस हीरे से भी अधिक हमारी आंखों की कीमत है। अच्छा अब हम और सूक्ष्म विचार करें कि यदि वह आत्मा नहीं तो हमारे वह दोनों नेत्र भी किस काम के ? इससे यह सिद्ध हुआ कि दुनिया भर के तमाम पदार्थों से वह आत्मा अधिकतम मूल्यवान है। सौ सवा सौ साल तक साथ रहने वाले इस नाशवान शरीर के लिये हम साठ घडी प्रयत्न करते हैं। और अनन्त काल तक साथ रहने वाले उस आत्मा के लिये हम एक घडी भी प्रयत्न नहीं करें तो यह हमारी बेसमझ है।

यहा पर एक प्रश्न उपस्थित होता है कि उस आत्मा के लिये प्रयत्न करना तो ठीक है परन्तु प्रयत्न करें तो कैसे ? कोई कहता है नमाज पढो, कोई कहता है रोजा रक्खो, कोई कहता है प्रतिक्रमण करो, सन्ध्या करो, प्रार्थना करो, कोई कहता है तीर्थयात्रा करो और कोई कहता है मंदिरों मे जाकर घण्टे हिलाओ। अपने अपने धर्म की सभी बडाई करते हैं अपनी २ ढपली और अपनी राग अलापते है। अब कहो हम कौनसा धर्म पालन करें ? किस का कहना मानें ? और किस के आगे नाक रगडें।

यह प्रश्न स्वाभाविक है, और इसका समाधान भी सरल है। धन कमाने वाले अलग २ धन्धा करते हैं। कोई नौकरी करते

हैं, कोई व्यापार। व्यापार में भी कोई सट्टा फाटका करते हैं। कोई दलाली, सर्राफी आदि। नौकरी में भी हाकिमी करते हैं, कोई मास्टरी करते हैं तो कोई गुमास्तगिरी मुनीमी वगैरा। इसी तरह शांति प्राप्त करते के लिये तथा आत्म चिंतन करने के लिये भी, विभिन्न सम्प्रदाय होते हैं। और उनमें भी नाना प्रकार की टुकड़ियें होती हैं। जिस तरह से एक कूए में सारी दुनियाँ पानी नहीं पी सकती, एक धन्धे से सारी दुनियाँ गुजरान नहीं कर सकती। उसी तरह से एक मार्ग से, एक धर्म से, एक सम्प्रदाय से और एक प्रकार से आत्मा की सेवा नहीं हो सकती। आत्म सेवा करने के लिये हमको अपनी रुचि के अनुसार किसी एक सम्प्रदाय का अवलम्बन लेना चाहिये या अपनी परम्परा वाली सम्प्रदाय का आश्रय लेना चाहिये "महाजनो येन गतःस पन्था" का अनुकरण करना चाहिये। जिस तरह से हम सब से पहिले आजीविका चलाने के लिये हमारे बाप दादों का धन्धा पकड़ते हैं। उसी तरह सब से पहिले हमारे पूर्वजों का पंथ अंगीकार करना चाहिये। फिर यदि उसमें सफलता न मिले तो समयानुसार-सुविधानुसार सम्प्रदाय परिवर्तन करना चाहिये। जिस तरह नौकरी में सेवा की और व्यापार में व्यापारिकता की आवश्यकता होती है उसी तरह से सम्प्रदाय में साम्प्रदायिकता की आवश्यकता अवश्य है परन्तु दूसरी सम्प्रदाय का अनुदारता पूर्वक विरोध नहीं करना चाहिये। जिस तरह एक व्यापारी नौकरी करनेवाले को गुलाम कह कर तिरस्कार नहीं करता और एक नौकरी पेशा वाले व्यापारी को कच २ करने वाला कहकर बुरा नहीं बतलाता है उसी तरह हमें दूसरी सम्प्रदाय वाले को काफिर, मिथ्यात्वी, अज्ञानी आदि कहकर सम्बोधन नहीं करना चाहिये। मिथ्यात्वी वह है जो सत्य अहिंसा

आदि को नहीं मानता, काफ़िर वह है जो धर्म को दुःख देने वाला बतलाता है परन्तु अपनी सम्प्रदाय से भिन्न होने से ही वह अज्ञानी नहीं होजाता, इसीलिये शास्त्रों ने १५ प्रकार के सिद्ध बतलाये हैं। नौकरी करने वाला आलसी नहीं और व्यापार करने वाला भी आलसी नहीं आलसी है बैठा रहने वाला उसी तरह से हिन्दू काफर नहीं और मुसलमान मिथ्यात्वी नहीं। मिथ्यात्वी है सत्य के फल मे विश्वास नहीं करने वाला। इस लम्बे व्याख्यान से यही मतलब निकलता है कि हमको विशाल दृष्टि बनानी चाहिये और निष्पक्ष भाव से राग द्वेष को जीतने वाले पारखण्डों के समूह रूप जैन धर्म के स्थापन करने वाले जिनेन्द्र भगवान की भक्ति करनी चाहिये।

बस इसीलिये मैंने यह छोटासा ग्रन्थ बनाया है। मैं नहीं कहता हूँ कि मेरा कहना अन्तिम सत्य है। परतु इतना विश्वास दिलाता हूँ कि इसको पढने वाले ब्रह्म की तरफ रुचि अवश्य करने लगेंगे।

उपकार

मैं प्रूफ संशोधक व पुस्तक संशोधक पं० शोभाचन्दजी भारिल्ल को अनेक धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने कृपा करके यह कष्ट उठाया। साथ ही मैं दानवीर सेठ सा० श्री छगनमलजी सा० (फर्म सेठ मिश्रीमलजी गंगारामजी सा०) का आभार माने बिना नहीं रह सकता जिन्होंने मेरे प्रयास को अपनाकर पुस्तक को प्रकाशित करने की परम उदारता दिखाई है।

आशा है अन्य श्रेष्ठिवर्य भी इसी प्रकार उक्त सेठ सा. की भांति अपने पैसे का सदुपयोग कर समाज के सामने आदर्श रक्खेंगे।

जिन २ महापुरुषों की प्रेरणा व सदुपदेशों से मुझे यह उत्साह मिला है उन महान् विभूतियों का मैं पूर्ण कृतज्ञ हूं।

भवदीयः—

बड़ी तीज
२४६१

डॉ. सूर्य-भानु जैन "भास्कर"
बड़ी सादड़ी (मेवाड़)

समर्पण

१

मरुधर के जो आदर्श सेठ, सीधे सच्चे व्यवसायी थे,
जो सब के सुखदाई थे असहायो के एक सहायी थे।
गंगा समान जो निर्मल थे अरु 'गंगाराम' कहाते थे।
जो दानवीर गम्भीर धर्म मे धीर सदा दिखलाते थे॥

२

अब वर्तमान श्रीमान 'छगन' जिनके सुपुत्र कहलाते है,
सब तरह उन्हीं के गुण वाले ही हमे दृष्टि मे आते है।
जो है जिनेन्द्र के भक्त इसी से यह जिन भक्ति छपाते है।
लो 'सूर्य्यभानु' स्वर्गीय सेठ के सुन्दर भेट चढ़ाते है॥

भवदीय —

मूथा जैन विद्यालय
रक्षा बन्धन
२४६१

डागी 'सूर्य्यभानु' जैन भास्कर
बड़ी सादड़ी (मेवाड)

॥ मंगल ॥

॥ दोहा ॥

करम दलन अर्हंत प्रभु, जयति सिद्ध भगवान।
छत्तिस गुण-धर धीरवर, जय आचार्य महान ॥१॥
उपाध्याय स्वाध्याय रत, साधु करे कल्याण।
पाचो पद मंगल करे, सुमिरत 'सूरजभान' ॥२॥

उपकार

(तर्ज—कमली वाले ने)

सुख शान्ति का डंका त्रिभुवन में, बजवादिया गुरु निर्ग्रथोंने, ध्रुव
चंचल लछमी चंचल आयुष, चंचल जीवन चंचल यौवन;
इक धरम अचल जगती तल में, फरमा, दिया गुरु निर्ग्रथों ने॥१
जग बीच कमल दल जल सम सब, रहना सीखो अय भविप्राणी;
अनुभव अमृत रस यह हमको, पिलवा दिया गुरु निर्ग्रथों ने॥२
इन बाह्य वस्तुओं पर प्यारो, अपनी ममता सब दूर करो;
हम कौन? हमारा यहां कौन? सिखला दिया गुरु निर्ग्रथोंने ॥३
ये रूपी रूपी हैं सारे कोई न हमारे हैं साथी;
इनसे हम भिन्न अरूपी हैं, बतला दिया गुरु निर्ग्रथों ने ॥४
स्वाभाविक निर्मल सुखमय यह, निजरूप कर्म ने दबा लिया;
इस अनादि बंधन को क्षण में, तुड़वादिया गुरु निर्ग्रथों ने ॥५
उनकी सुदया से 'सूर्यभानु', कुछ आत्म तत्व का भान हुआ;
मृगने समझा कस्तूरी को, समझा दिया गुरु निर्ग्रथोंने ॥६
सुख शांति का डंका त्रिभुवन में बजवा दिया गुरु निर्ग्रथोंने॥मिलत

श्री जिन-भक्ति

प्रथम खंड

श्री जिन-भक्ति

प्रथम खंड

डाँगी चौवीसी

॥ नमस्कार ॥

ऋषभ प्रमुख महावीर प्रभु, तीर्थंकर चौवीस ।
यथाशक्ति भक्ती करूँ, जग जीवन जगदीश ॥१॥

प्रणमूँ प्रथम प्रभामयी, पृथ्वी पुत्र गणेश ।
पावन पुण्य प्रभाव से, प्रकटे प्रेम विशेष ॥२॥

विघ्न हरे मंगल करे, गुरु गौतम भगवान ।
शासनपति प्रभु वीर के, गणधर शिष्य महान ॥३॥

१

वृषभ-चिन्ह] **ऋषभ** [स्वर्ण-वर्ण

तर्ज—मालकोप-पपैया काहे मचावत शोर

मुग्ध-मन-मानव ! मेरी मान,
तीर्थंकर प्रभु ऋषभदेव का करते रहना ध्यान । ध्रुव ।
मां 'मरुदेवी' पिता 'नाभि' के जगत् पिता सन्तान;
परमेश्वर बन प्रथम जिन्होंने, दिया सृष्टि को ज्ञान ॥१॥
ममपति नरपति गुरुपति जगपति, जिनपति परम प्रधान;
सुरपति सहित चराचर सुमिरत, सकल कला गुण खान ॥२॥
अजर अमर अखिलेश निरंजन, दीनबन्धु भगवान;
जग जीवन प्राणों से प्रियतम, पूरण प्रेम-निधान ॥३॥
धन्य 'अष्टमी' धन्य 'अयोध्या', अचरज हुआ महान;
'चैत्र मास की कृष्ण रात्रि' में, प्रगटे त्रिभुवन भान ॥४॥
सकल चतुर्विध संघ निरंतर, करता जा उत्थान;
यही भावना भाते रहना, है प्रभु का गुण गान ॥५॥
गुरु निर्ग्रंथों ने बतलायी, शुद्ध देव पहिचान;
सब से पहले 'सूर्य भानु' करना उनका सन्मान ॥६॥
(मिलत) मुग्ध-मन-मानव मेरी मान ।

स्वर्ण]

अजित

[गजराज

तर्ज--सिन्धभैरवी, कालिंगडा पीलू, कानडा, चौपाई आदि

अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी, जगत जीत निर्भयजयपामी ॥ध्रुव
'विजया' माता के प्रभु जाये; 'जितशत्रू' नृप गोद खिलाये।
जय जय तीन लोक के स्वामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥१॥
भव भव मे कर्मों से हारा; कोई मिला न नाथ सहारा।
अब तू काम बना निष्कामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥२॥
कुटिल, कठोर, कदाग्रह-कामी; क्रूर, कपट-कर्ता, हरामी।
पर तू पतित उधारन नामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥३॥
कब तक यह भव रोग हरोगे; जन्म-मरण-दुख दूर करोगे?
तुमको पाया शिवसुखधामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥४॥
सकल चतुर्विध संघ सुनावे, प्रभु चरणों मे चित्त रमावे।
महर करो अनन्त विश्रामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥५॥
गुरु निर्ग्रथों ने है समझाया; तेरा नाम मंत्र बतलाया।
'सूर्य भानु' अविचल पथगामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥६॥

अश्व] ३ संभव [स्वर्ण

संभव

तर्ज—दुनिया में किसी का कोई नहीं

संभव तीर्थंकर सुमिर सयाने, साथी तेरा कोई नहीं । ध्रुव ।
सब स्वजन सनेही स्वारथ से, सम्पन्न स्नेह बतलाते हैं;
सहसा संकट का समय हुआ, ले समझ सहारा कोई नहीं॥१.
ना मात पिता का तू साथी, ना मात पिता तेरे साथी;
ना तू उनका रखवारा है, तेरा रखवारा कोई नहीं॥ २.
पहिचान आत्म पद को प्यारे, प्रभु से तू प्रेम लगा पूरा;
उस परम पुरुष परमातमसा, परभव में प्यारा कोई नहीं। ३
धन पिता 'जितारथ' 'सैन्यादे' माता के लाल दुलारे हैं;
श्री नगर 'अयोध्या' 'सैन्यादे' माता के लाल दुलारे हैं;.
श्री संघ चतुर्विध को स्वामी, हैं समय समय स्थापित करते;
हम सब दीनों के दीनबन्धु बिन, तारनहारा कोई नहीं ॥५
गुरु निर्ग्रंथों ने दया लाय, जगती तल को यह समझाया ।
ऐ 'सूर्यभानु' उन जिनवर सम, देव दूसरा कोई नहीं॥ ६

मरकट] ४ अभिनन्दन [स्वर्ण

(तर्ज—रङ्गत मारवाडी ख्याल)

अभिनन्दन ध्याऊं पाऊं शिव सम्पत्ति धर्म प्रताप से ॥ध्रुव॥
काम क्रोध मद लोभ छोड कर, मै प्रभु के गुण गाऊं;
तन मन धन सब अर्पण करके, उनके सम बन जाऊँ ॥१॥
निर्मल दर्पण सम उनमे निज, आत्म स्वरूप लखाऊं;
ब्रह्मानन्द मग्न होकर के, अविनाशी कहलाऊं ॥ २ ॥
इन्द्रिय सुख को स्वप्न समझ कर, तनिक न मै ललचाऊं;
ममता तज वैराग्य बढाऊं, मनको अचल बनाऊं ॥ ३ ॥
हृद् तंत्री की तान सुनाऊं, अन्तर नाद बजाऊं;
आत्म समान सृष्टि को लखकर, शुद्ध भावना भाऊँ ॥ ४ ॥
'संवर' पिता मात सिद्धार्था नन्दन पर बलि जाऊं;
पूर्ण नमूना परमातम का, समझ सामने लाऊं ॥ ५ ॥
गुरु निर्ग्रंथ ज्ञान बतलाया, उनको शीप नवाऊं;
तीर्थंकर की सुखद भक्ति का, सबको पाठ पढाऊं ॥६॥
सकल संघ को अनुभव के, अमृत का स्वाद चखाऊं;
'सूर्य भानु' स्वामी ! नयनों से स्नेह अश्रु बरसाऊं ॥७॥

क्रौंच] ५ सुमति [(स्वर्ण

सुनो हे सुमति नाथ भगवान, दीजिये मुझे सुमति का दान ।ध्रुव।
तुम समान कोई है न दूसरा, दीन दयाल कृपाल,
मैं सेवक तू स्वामी मेरा, लीजे नाथ सँभाल;
आप हैं सर्व गुणों की खान ॥ १ ॥
मैं तो दीन मलीन भिखारी, नीच पतित मति हीन,
तू जिनदेव सुमति का सागर, अचल ज्ञान में लीन;
करो रक्षा पापी पहिचान ॥२॥
भव समुद्र में नैया डोले, कौन बचावन हार,
घड़ घड़ घड़ कर क्रोध मेघ, धर धर बरसावत धार;
बीजली माया लेती जान ॥३॥
लोभ मोह के भँवर कपट के, सर्प करत फुँकार,
डूबी जाति मेरी नैया लीजे नाथ उबार;
'मंगला' माताजी के प्राण ॥ ४ ॥
श्री निर्गंथ हमारे गुरुवर, तारन तरन जहाज,
'मेघ' पुत्र का शरण बताया, धन्य गरीब—निवाज;
उन्हीं का है उपकार महान ॥ ५ ॥
सकल चतुर्विध संघ तुम्हारे, चरण कमल का दास,
'सूर्य भानु' सब आशा पूरो, कर कर्मों का नाश;
यही लो विनती मेरी मान ॥ ६ ॥

पद्म] ६ [रक्त

पद्म

तर्ज—वनजारा

प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा, जग जीवन प्राण हमारा। ध्रुव ;
तुम तीन लोक के स्वामी, तो हम सेवा के कामी।
'श्रीधर' सुत देव दुलारा, प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा ॥१॥
तुम निर्मल ज्ञानी पूरे, तो हम भी नाथ अधूरे;
यह चेतन अंश तुम्हारा, प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा ॥२॥
यदि तुम अम्बर हम धागा, तुम सोना हम सौहागा;
तुम किम विध हम से न्यारा, प्रभु पद्मजिनेश्वर प्यारा ॥३॥
यदि तुम हो सूरज स्वामी, हम किरन नयन अभिरामी;
यह भेदन हुआ लिगारा, प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा ॥४॥
माता 'कुसुमा' के जाये, निर्गंथ गुरु बतलाये;
हम मन के एक सहारा, प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा ॥ ५ ॥
तुम दीन बन्धु अविकारी, हम दीन मलीन भिखारी:
धन निगम निरूपण सारा, प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा ॥६॥
सम्पूर्ण मय यो गावे, चरणो मे चित्त लगावे,
जय 'सूरजभानु' अपारा, प्रभु पद्मजिनेश्वर प्यारा ॥ ७ ॥

———

स्वस्तिक] ७ (स्वर्ण

सुपार्श्व

तर्ज--प्रभाती, ताल—दादरा

जयति जय सुपार्श्वनाथ प्राण से पियारे। ध्रुव०
नृप 'प्रतिष्ठ' तात, मात' पृथ्वि' देवी अंगजात;
शुचि सुवर्ण वर्ण गात, दीन के दुलारे ॥१॥
विमलविभु दयानिधान, द्विशत धनु शरीर मान;
धन्य अटल अचल ज्ञान, शुक्ल ध्यान धारे ॥२॥
मदनमोह से विछोह, कोह लोह से विद्रोह;
सुखद सुपद समारोह, सरस सोहना रे ॥३॥
नभ अलोक मोद मेह, स्रवत शांति का सनेह;
तीन लोक अग्रगेह, देह को निवारे ॥४॥
सकल संघ करत गान, दीजिये सुज्ञान दान;
वीनती पै राखो ध्यान, तान मान वारे ॥५॥
श्री निर्ग्रन्थ गुरु मुनीश, देव बताया जिनेश;
चरण शीप नमत 'सूर्य भानु' को निहारे ॥६॥

चद्र] ८ चन्द्रप्रभ [श्वेत

(नर्ज-मगल ताल ३-शिवभोला भडारी लोगों)

चन्दा प्रभु जिन ध्यावो माधो, चन्दा प्रभु जिन ध्यावोरे॥ध्रु०
सोऽहं ब्रह्म नित्य अविनाशी, अलख स्वरूप लखावोरे;
अजपा जाप जपो मेरे चेतन, निजगुण माहि समावोरे ॥१॥
मूल मति का रूप एक है, भाजन विविध बनावोरे;
त्यो सर्वत्र ईश की झाकी, दुविधा भाव मिटावोरे ॥२॥
वह निर्गुण सूक्षम से सूक्षम, दृढतर ध्यान-जमावोरे,
ब्रह्मानंद रूप सागर में, एक भेक हो जाओरे ॥३॥
ऐसा ज्ञान करो मेरे चेतन, सिद्ध जिनंद कहावोरे;
लोकातीत पहुंच करके, अक्षय-अनंत सुख पावोरे ॥४॥
कर्मन काया मोहन माया, भूख तृषा विसरावोरे;
कोई न छोटा कोई न मोटा, ज्योति मे ज्योति मिलावोरे ॥५॥
'महासेन' नृप 'लिखमा मा के, सुत से प्रेम लगावोरे;
'सूर्य भानु' अष्टम जिनवर के, हित चित से गुण गावोरे॥६॥

मत्स्य]

९

सुविधि

[श्वेत

(तर्ज-रसिया शंकर रम रह्यो रे पहाड़न में भोला पारवती के संग)

प्रणामूँ 'पुष्पदन्त' भगवन्त, महन्त-सन्त, जयवन्त अनन्त। ध्रु०

शिवगति गमन, सुविधि कर कथन, सुविधि जिन पति विलसन्त;
मदन मलन अघ हरन, करम दल दलन नवम अरहन्त ॥१॥

सकल अमर गण हिलमिल, मंगल मय दुंदुभि उचरन्त;
ऋषि मुनि जनगण जिनगुण, सुमिरत अनहद मोद लहन्त ॥२॥

नेति नेति कर निगम पुकारें, शास्त्रन पावें अन्त;
निज निज मति सम करत कल्पना, मनगढ़न्त मतिमन्त ॥३॥

नृप 'सुग्रीव' पिता, माता 'रामा देवी' के नन्द,
गुरु निर्ग्रन्थों ने बतलाया, ऐसा आनन्द कन्द ॥४॥

सकल चतुर्विध संघ निरंतर, सुविधिनाथ सुमिरन्त;
दर्शन का प्यासा निशि-वासर, निजपद मेंह विचरन्त ॥५॥

'सूर्य भानु' गुरु निर्ग्रन्थों के, चरणाम्बुज पकरन्त;
तीर्थंकर का ध्यान धरत, भव जलधि पार उतरन्त ॥६॥

नोट-यह भजन अनुप्रास अलंकार वाला है अतः इसकी टेर (ध्रुव) को शुद्धता से पढ़नी चाहिये तब जुड़ेगी।

———

श्रीवत्स] १० [स्वर्ण

शीतल

(तर्ज—प्रभाती

नित उठ शीतल जिन सुमिरत, भवि जन भव जन्य मैल धोवे।
क्षण भर मे संसार सिन्धु की, बड़वानल शीतल होवे ॥१॥
धन वे जन जो मनमोती को, उनके धागे मे पोवे;
सदा उन्हीं का नाम रटत, संकट मे धीरज ना खोवे ॥२॥
विषय कषाय बाह्य सुख समझे, तनिक न उन पर जो मोहे;
जल मे कमल-पत्र से रह कर, मोहनींद में ना सोवें ॥३॥
आतम स्वरूप भूल करके नर, जो भव भव मे ना रोवे;
मनुज जन्म को पायनिरन्तर, पावन पुण्य बीज बोवे ॥४॥
'दृढ़रथ' तात, मात 'नंदा' सुत, का निर्मल स्वरूप जोवे,
शीतल जिन के शीतल जलमे, 'सूर्य भानु' निर्मल होवे ॥५॥
नित उठ शीतल जिन सुमिरत, भविजन भवजन्य मैल धोवे;
क्षण भर मेसंसार सिन्धु की, बड़वानल शीतल होवे ॥६॥-ध्रुव।

———

गौडा] ११ श्रेयांस [स्वर्ण

(तर्ज लँगडी लावणी, सरल प्रभाती में भी)

नर-पति 'विष्णु' 'विष्णु' महारानी, नंदन धन 'श्रेयांस कुमार,
इस अवसर्पिणि काल मध्य, ग्यारहवें आप हुए अवतार ॥ध्रुव
जगतीतल में, दश दिशि लौं चहुँ ओर किया यश का विस्तार;
उस यश के निर्मल प्रभाव से, हुआ अनेकों का निस्तार ॥१॥
अष्ट करम के दल में राजा, मोह शत्रु का कर संहार;
इस भय-प्रद भव-जल-निधि, से भगवंत करेंगे कब उद्धार ॥२॥
आवागमन मिटाओ स्वामी, तुम बिन किन से करूँ पुकार;
और कुदेव हमें क्या तारें, उन पर भी कर्मों की मार ॥३॥
कोई क्रोधी कोई मानी, कोई विषयों का सरदार;
तू तो नाथ कलंक रहित, अति-विशुद्ध और सदा अविकार ॥४
आगम वेद पुराण शास्त्र, सुरगुरु कहते जगदीश अपार;
भव तारक सुन नाम जिनेश्वर, आया हूँ तेरे दरबार ॥५॥
डाँगी 'सूर्यभानु' गुण गावे, गुरु निर्ग्रंथों का आधार;
सकल चतुर्विध संघ प्रभू के, चरण कमल का तावेदार ॥६॥
नर-पति 'विष्णु' 'विष्णु' महारानी नंदनधन श्रेयांस कुमार;
इस अवसर्पिणि काल मध्य, ग्यारहवें आप हुए अवतार ॥मिलत

महिष] (रक्त

१२
वासु पूज्य

(तर्ज गर्भी पणिहारी या देशी महाड)

श्री जिन मन मंदिर आये हो भविकजन ! वासुपूज्य भगवान
श्री जिन मन-मंदिर आये . हो ॥ ध्रुव ॥
राग द्वेष की ग्रन्थि हटाई. हो . भविकजन !
हुआ स्वरूप का भान ॥ श्री जिन०॥ १ ॥
समकित लाभ करो सुख कारी. हो. भविकजन !
समझो अपनी ज्ञान ॥ श्रीजिन० ॥ २ ॥
फिर चारित्र वृत्ति को धारो.. हो भविकजन !
क्रमिक करो उत्थान ॥ श्रीजिन० ॥ ३ ॥
नृप " वसुपूज्य " 'जया' के जाये हो भविकजन !
निर्मल ज्योति महान् ॥ श्रीजिन० ॥ ४ ॥
गुरु निर्ग्रन्थों ने बतलाई.. हो . . भविकजन !
शुद्ध देव पहिचान ॥ श्रीजिन० ॥ ५ ॥
' सूर्यभानु ' अनुभव प्रकटाओ हो . भविकजन !
कर लो निज कल्याण ॥ श्रीजिन० ॥ ६ ॥
श्री जिन मन मंदिर आये हो भविकजन ! वासु पूज्य भगवान्
श्री जिन मन-मंदिर आये हो . ॥ मिलत ॥

वाराह]

१३
विमल

[स्वर्ण

(तर्ज गजल ताल ३—क्या हुआ गर मर गये अपने के वास्ते)

'विमल' जिनके स्मरण बिन नर-जन्म तेरा भार है ।। ध्रव ।।
कान फाड़े, जटा, बांधे, सिर मुंडाये, क्या हुआ ?
भक्ति बिन पाखण्ड किरियाकांड सब बेकार है ।। १ ।।
'बड़ा धोता बड़ा पोथा, पंडता पगड़ा बडा'
तिलक छापा कर खड़ा, समझा न जगदाधार है ।। २ ।।
छन्द अरु साहित्य पढ़ क्यों व्यर्थ व्याकरणी बना,
आत्मतत्व न जान कर, भटका जगत मंझार है ।। ३ ।।
राग द्वेष कषाय से, सहने पडे दुख लोक में,
शरण ले जिनराज का अब, शास्त्र का जो सार है ।। ४ ।।
प्रभु बिना कोई न देखा, देव भव-मल हीन है
इसलिए संसार--जल--निधि; में वही आधार है ।। ५ ।।
स्वामि 'सूरज-भानु' के देवाधिदेव महान् हैं,
मात श्यामा नंद प्रभु, 'कृतभानु' के सुकुमार हैं ।। ६ ।।
विमल जिनके स्मरण बिन नर जन्म तेरा भार है ।। मिलन ।।

———

बाज) १४ (स्वर्ण

अनंत

(तर्ज रेखता ताल दादरा)

भगवंत श्री 'अनंत' सिंहसेन नन्द हैं,
खेले 'सु-जशा, गोद, चौदवे जिनन्द हैं ॥ ध्रुव ॥
जिनके अनंत निज-गुणों का पार है नहीं;
वे नित्य और सत्य चिदानंद कंद हैं ॥ १ ॥
यह दोष-भरी वाणि क्या महिमा सुनायगी ?
गुरुराज शेष शारदा, सुर्गिद मंद हैं ॥ २ ॥
आगम, निगम, पुराण, वेद शास्त्र भी सभी,
बस नेति नेति नेति बोल कर के बन्द हैं ॥ ३ ॥
पहुंचे हैं अचल स्थान कर्म द्वन्द्व दूर कर;
गाते हैं सकल संत यशोगान छन्द हैं ॥ ४ ॥
सुनले विनय हमारी 'सूर्य भानु' अब जग,
काटें दयानिधान ! लगे कर्म फंद हैं ॥ ५ ॥

भगवन्त श्री अनन्त सिंहसेन नंद हैं
खेलें सुजशा-गोद चौदवे जिनंद हैं ॥ मिलत ॥

१५

वज्र) **धर्म** (स्वर्ण

(तर्ज—लावणी)

धन 'धर्म-नाथ' धरमावतार सुन मेरी,
करुणा-निधि ! काटो, अब कर्मों की बेरी ॥ ध्रुव ॥

मैंने भव भव में जीव अनेक सताये;
सज्जन पुरुषों पर, मिथ्या दोष लगाये।

फँस मोह जाल में तजी भक्ति प्रभु ! तेरी;
करुणा कर ! काटो अब कर्मों की बेरी ॥ १ ॥

ग्रामीण सुअर सम विषयों में ललचाया;
पर नाथ ! आज तक भी सन्तोष न पाया;

संचय करली भय-प्रद पापों की ढेरी;
करुणानिधि ! काटो अब कर्मों की बेरी ॥ २ ॥

ना हाय ! कभी दीनों को सुख पहुँचाया;
सुख-दाता को भी उल्टा पाठ पढ़ाया ॥

क्या कहूं ? नाथ ! चहुं-गति में खाई फेरी;
करुणाकर ! काटो ! अब करमों की बेरी ॥ ३ ॥

सच्चे गुरुओं ने धर्ममार्ग समझाया;
तेरा स्वरूप भी कई बार बतलाया ।

पर अंतराय ने लिया मुझे आ घेरी;
करुणानिधि ! काटो, अब कर्मो की बेरी ॥४॥

ले ले कर 'व्रत पच्चखान' न पूरे पाले;
नर जन्म पाय कर्तव्यो को न संभाले।
अब रही भयंकर कुटिल काल की भेरी;
करुणाकर ! काटो, अब, करमो की बेरी ॥५॥

अब जन्म-मरण का दुःख न सहा है जाता,
सांसारिक सुख मे सार नजर नहिं आता।
इसलिये बनाई बुद्धि तुम्हारी चेरी,
करुणानिधि ! काटो अब करमो की बेरी ॥ ६ ॥

अब तुम बिन ऐसी किन को विनय सुनाऊं;
'सुव्रता' के नंदन ! तेरी, शरणे आऊं।
नृप 'भानु' पुत्र अब तारो, करो न देरीः
करुणाकर ! काटो, अब करमो की बेरी ॥ ७ ॥

गुरु 'निग्रंथो' ने हमे ज्ञान सिखलाया;
तुम पर दृढ श्रद्धा करना धर्म बताया।
अब ! सूर्यभानु ! उनकी ही कृपा घनेरी;
करुणानिधि ! काटो अब करमो की बेरी ॥ ८ ॥

धन धर्मनाथ ! धर्मावतार ! सुन मेरी,
करुणाकर ! काटो, अब करमों की बेरी ॥मिजा

करम वेदनी दूर हटा कर अव्याबाध हुए स्वामी,
आयु कर्म को क्षय कर के अवगाहन निश्चल प्रभु पायी।
नाम कर्म को नाश किया जब निराकार हो शिव-धामी,
गौत्र कर्म का मेल हटा बन गये अगुरु लघु अभिरामी।
आठ गुणों को धारण कर के सिद्ध रूप को पावे,
दुनियां में ऐसा देव नजर नहीं आवे ॥ ३ ॥

दीन अनाथ बाल बनिता गौ का हत्यारा हो पापी,
मांस मद्य खाता, पीता, छः कायों का जो परितापी।
शास्त्रों की मर्य्यादा तोड़ कर, झूठी भी जिसने थापी
विषय कषाय पुष्ट करने को हिंसा करत बिना मापी
वह भी यदि शरणे आजावे, भव समुद्र तिर जावे।
दुनियां में ऐसा देव नजर नहीं आवे ॥ ४ ॥

आत्म प्रकाशक, जगदुद्धारक, विरद जिनेश्वर तेरा है,
तेरी महिमा का गाना जग जीवन, जीवन मेरा है।
चंद्र चकोर दंपती में ज्यों होता प्रेम घनेरा है;
त्यों तेरा ही महा प्रभो! मेरे मन मांहि बसेरा है।
धन्य भाग्य है उस नर का जो, तीर्थंकर को ध्यावे;
दुनिया में ऐसा देव नजर नहिं आवे ॥ ५ ॥

कल्प वृक्ष अरु काम धेनु मम धर्म मोक्ष का जो दाता;
जिन की सेवा से शुभ गति मे, इच्छित शिव संपति पाता ।
तारण तरण जहाज, धन्य जिनराज, त्रिलोक पिता माता,
'सूर' पिता 'श्री' देवी माता-सुत गुण गाता हर्षाता;
गुरु निर्ग्रंथो की किरपा से ' सूर्य्य भानु ' दरसावे,
दुनिया मे ऐसा देव नजर नहिं आवे ॥ ६ ॥
कुंथु नाथ जिन राज हमारे, अविकारी कहलाने;
दुनियां मे ऐसा देव नजर नहिं आवे ॥ मिलत ॥

नंदावर्त) १८ (स्वर्ण

अरह

तर्ज—सोरठ, ऋतु आयाँ वोले मोरा, रे, मारो श्याम विना जीवदोरा

जो अरहनाथ को ध्यावे, हो, सब दुःख नष्ट हो जावे ॥ ध्रुव

निर्गुण ब्रह्म सिद्ध सब प्राणी,
निज स्वरूप को पावे, हो, जो० ॥१॥

जग-जीवन की झीनी चदरिया,
प्रभु का रंग चढ़ावै, हो, जो० ॥२॥

चौरासी योनी में भटक्यो,
फिर कबहूना आवे, हो, जो० ॥ ३ ॥

मानव—जन्म अमोलक पायो;
विरथा नाँहि गमावे, हो, जो० ॥४॥

'देवि' 'सुदर्शन' नृप नंदन का;
चहुँ दिशि यश गुंजावे. हो, जो० ॥५॥

'सूयंभानु' गुरु निग्रथों के,
चरणों शीष नमावे, हो, जो० ॥६॥
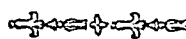
कुंभ] **१६ मल्लि** नील]

तर्ज–गजल ताल ३, इतना तो करना स्वामी, जब प्राण तन से निकले

प्रभु मल्लिनाथ स्वामी, यह वीनती हमारी ॥ ध्रु० ॥

जग की वन स्थली मे, हम मोर बन के नाचे;
तुम मेघ बन के आना, सूखी पड़ी है क्यारी ॥१

जल के सरोवरों में, हम फूल बन खिलेंगे;
तुम सूर्य बन के आना, अँधियारी रात कारी॥२

फूले फले अनूठे, उद्यान हम बनेंगे,
ऋतु राज बन के आना, शोभा बने निराली॥३

बन कर चकोर स्वामी, देखेंगे राह तेरी;
तुम चंद्र बन के आना, निरखें छटा तुम्हारी॥४

हम दीन हीन बन के, दर पर खड़े रहेंगे;
दातार बन के आना, हमको समझ दुखारी॥५

संसार मे हमारे गुरु देव हैं महान,
सबको उन्हीं ने तारे, अब की हमारी बारी॥६

धन तात 'कुंभ' माता, 'परभावती' के प्यारे;
अय 'सूर्य भानु!' मेरे मन मे बनो विहारी॥७

प्रभु मल्लिनाथ स्वामी, यह वीनती हमारी॥ मिलत॥

२०

कूर्म) # मुनि-सुव्रत (श्याम

मुनि सुव्रत स्वामी, अंतरयामी, महिमा तेरी अपार ॥ध्रुव॥
अगम अगोचर तू अविनाशी, अचल अमल अविकार;
एक, अनेक, अखंड, सूक्ष्म-तम, अनुतम सुख-दातार ॥१॥
निर्विकल्प, निर्लेप, निरामय, निगम-निरूपण-सार;
निराकार, निर्भय, निखिलेश्वर, निष्कलंक अवतार ॥२॥
तेरी सिद्ध दशा सम मेरा, आतम-स्वरूप, विचार;
जीवा जीव मिश्रता से यह, प्रति भासित संसार ॥ ३ ॥
शुक सेमर मृग तृष्णा सम, संशय संसार मँझार;
सीपरि रजत स्वप्न संपति सम, कल्प्य जगत व्यवहार ॥४॥
वंध्या सुत आकाश पुष्प सम, भव कल्पना असार;
स्यात्त्रिकाल ध्रुव निज स्वरूप; समझत सब-जानन हार ॥५॥
'सुमति' पिता 'पद्मावति' माता-नंदन सुगुणागार;
"सूर्यभानु" अनुभव स्थिति प्रकटी, गुरुओं का आधार ॥६॥
मुनिसुव्रत स्वामी अंतर्यामी, महिमा तेरी अपार ॥ मिलत ॥

नील कमल) २१ नमि (स्वर्ण

(तर्ज—मेरे मौला बुलालो मदीने मुझे)

नमीनाथ प्रभु से मिलादो कोई,
सारे बंधन दूर भगादो कोई ॥ध्रु॥

चैन पड़ता है नहीं हमको यहा अब तो जरा,
प्रभु के अनोखे रूप ने मन भक्ति भावों से भरा।
जरा चहरा सुनहरा दिखादो कोई ॥ नमी ॥ १ ॥

यहां ढूंढा वहा ढूंढा दर बदर फिरता फिरा,
पर पता पाया नहीं दिन रात दुःखो से घिरा।
कहां छिपकर है बैठा बता दो कोई ॥नमी॥२॥

इस समय इस काल मे इक्कीसवा जिन राज था,
"विजय""विप्रा"नंद था भवियों का जो सिरताज था।
उनका चारू चरित्र सुनादो कोई ॥ नमी ॥ ३ ॥

सत्य शिव सौंदर्य मय, जिनका स्वरूप महान् है,

ज्ञान मय शुभ ध्यान मय सम्पूर्ण सौख्य निधान है।
अनुभव अमृत का प्याला पिलादो कोई॥नमी॥४॥

मल रहित बन सिद्ध पदवी पर अचल आसीन है,
निज गुणों में लीन हैं जो सर्वथा भय हीन हैं।
मेरी उनसे जुदाई हटादो कोई ॥ नमी ॥ ५ ॥

डांगि सूरजभानु को निर्ग्रंथ ने समझा लिया,
डूबते संसार जल-निधि में शरण पकड़ा दिया।
अब करमों का दुःख छुड़ादो कोई ॥ नमी ॥ ६ ॥
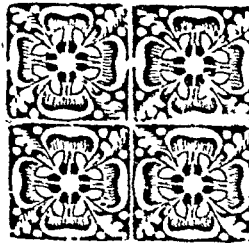
शख) २२ नेमि (श्याम

(तर्ज लावणी कव्वाली)

भज मन "नेमिनाथ" भगवान दया का पाठ पढाने वाले ।ध्रुव।
माता शिवा देवि के जाये, नृपति समुद्र विजय सुख पाये ।
हरि के अनुज नाथ कहलाये, यादव वंश दिपाने वाले ॥१॥
आप आयुध शाला मे जाय, दिया पंचानन शंख बजाय ।
भगे सुन वासुदेव महाराय, त्रिखंडी नाथ कहाने वाले ॥२॥
देख कर सहसा नेमि कुमार पड़े गिरिधर अचरज मंझार
प्रभु ने उनका जान विचार, बने भुज दण्ड बढाने वाले ॥३॥
कहा 'माधव'! सुनलो यह बात! झुकादो आप हमारा हाथ!
लटके बाहू पर यदुनाथ, नाथ! हरि को शरमाने वाले ॥४॥
कृष्ण ने अतुल जान बलवान चढाई आडम्बर से जान ।
टेर सुन पशुओ की भगवान, नार राजुल छिटकाने वाले ॥५॥
चढे गिरिनार हमारे स्वामी तीर्थंकर बन शिव गति पामी ।
'सूरजभानु' मोक्ष का कामी गुरु निर्ग्रन्थ' सिखाने वाले ॥६॥
भज मन 'नेमिनाथ' भगवान दया का पाठ पढाने वाले ॥मिलत॥

२३

नाग) **पार्श्व** (नाल

(तर्ज—माई मैं तो दरद दिवानी, मारो, दरद न, जाने कोय)

मन में आय वसो प्रभु ! पारस नाथ जिनंद ॥ ध्रुव ॥

रोम रोम में रमिये स्वामी;
ज्यों फूलन में गंध ॥ मन में० ॥ १ ॥

अंग अंग में प्रेम रंग हो;
ज्यों भृंगन मकरंद ॥ मन में० ॥ २ ॥

विषय संग आसंग न होवे;
ज्यों जल में अरविंद ॥ मन में० ॥ ३ ॥

नाग नागिनी देव वनाये;
'पद्मावति' धरणिन्द्रं ॥ मन में० ॥४॥

कमठा सुर उपसर्ग मचाये;
डिगे न ज्यों अचलिन्द ॥ मन में० ॥५॥

'अश्वसेन' 'वामा' के नंदन,
'सूर्य्य भानु' सुख कंद ॥ मन में० ॥ ६ ॥

मन में आय वसो प्रभु ! पारस नाथ जिनंद ॥ मिलन ॥

७४

सिह] # महावीर [स्वर्ण वर्ण

(तर्ज आशावरी ताल धमाल)

मैं तो आयो शरण तुम्हारी, वीर प्रभु! दीनों के हितकारी ।ध्रुव।
'चंडकोशि' को नाथ उबारा महा परीषह भारी,
अर्जुन माली था महा पापी, पहुंचा मोक्ष मंझारी ॥१॥
पावापुरी में समवसरण की, सुन कर छटा निराली;
गौतम प्रमुख इग्यारह पंडित, करण विवाद विचारी ॥२॥
इन्द्र जालिया कहते २ आये वारी व री,
मनका संशय दूर निवारी, किये महाव्रतधारी ॥ ३ ॥
आनंदादिक श्रावक तारे, चंदन बाला नारी,
धन्ना शालि भद्र उद्धारे, अति महिमा विस्तारी ॥ ४ ॥
धरम नाम पर पशु हिंसा, करते थे घोर अनारी,
परम धरम का मरम बताया, धन्य दया अवतारी ॥ ५ ॥
शूद्र जनों को अधिक सताते थे जन अत्याचारी,
हरि केशी आदर्श बनाये, किये मोक्ष अधिकारी ॥ ६ ॥
तारे तात सिद्धारथ राजा, अरु त्रिसला महतारी
ऐसे आप अनेकों तारे, अबकी हमारी वारी ॥ ७ ॥
शासन के सरदार निहारो, दर पर खड़ा भिखारी,
अब स्वामी मत देर लगाओ, सूर्य भानु बलिहारी ॥ ८ ॥
मैं तो आया शरण तुम्हारी, वीर प्रभु दीना के हितकारी। मि०

मंगल

(तर्ज—कुंडलियाँ)

१६ ६१
भूग्रह ग्रहभू विक्रमी, कार्तिक का था मास,
दीपावलि के शुभ दिवस, उदित हुआ उल्लास ।
उदित हुआ उल्लास, 'भक्ति प्रभु की सुखदाई';
यही समझ कर 'सूर्य भानु' चौपाई गाई ।
नित प्रति तीनों काल, पढ़ेंगे जो नर नारी,
सिद्ध लोक के वे निश्चय, होंगे अधिकारी ॥१

(दोहा)

गुरुनिर्ग्रंथों की कृपा, पाया सत्य विवेक;
सकल चतुर्विध संघ को, भेंटकरी है एक ॥२ ॥

श्री जिन भक्ति

द्वितीय खण्ड

१

संपूर्ण-जिन-भक्ति

(तर्ज—होली, दुपहरकी, "ब्रज मंडल देश बताओ रसिया")

मिल आओ, रे, चौबीस जिन ध्याओ मिल आओ ।ध्रुव।

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन;
सुमतिनाथ के गुण गावो; मिल० ॥१॥

शीतल जिन सिरियंस सुमिर लो,
वासु पूज्य भज सुख पाओ; मिल० ॥२॥

विमल अनंत धर्म तीर्थकर;
शांति नाथ को सिर नाओ मिल० ॥३॥

कुंथु अरह मल्ली मुनि सुव्रत;
नमि नेमि मत विसराओ मिल० ॥४॥

पारसनाथ वीर प्रभु स्वामी,
जिन शासन में हुलसाओ; मिल० ॥५॥

गुरु निर्ग्रन्थ देव बतलाया,
'सूर्य्यभानु' शरणे जाओ, मिल० ॥६॥

मिल आओ रे चोवीस जिन ध्याओ; मिल आओ ।।मिलत।।

२
संपूर्ण-जिन-भक्ति

(तर्ज काली कमली वाले तुम पर लाखों सलाम)

तन मन तुम पर वारे, मेरेप्यारे जिनंद, मेरे प्यारे जिनंद ५,।।ध्रुव

ऋषभ अजित संभव अभिनंदन;
सुमति पद्म सुपारस चंदन ।
दीनो के दुलारे मेरे प्यारे जिनंद ५ ॥ १ ॥

सुविधि सितल सिरियंस मुनीश्वर;
वासु पूज्य सिरि विमल जिनेश्वर।
अनंत नाथ सहारे मेरे प्यारे जिनंद ५ ॥ २ ॥

धर्म, शांति, कुंथु, अर स्वामी;
मल्लिनाथ, मुनि सुव्रत नामी ।
नेमि नमी रखवारे मेरे प्यारे जिनंद ५ ॥३॥

पार्श्वनाथ सिरि महावीर प्रभु;
ग्यारह गणधर विहर मान विभु।
ये सब धर्म सितारे मेरे प्यारे जिनंद ५ ॥४॥

अजर, अमर, अखिलेश, निरंजन,
मुनिमन रंजन, भवदुख भंजन ।
सिद्ध सुपद को धारे मेरे प्यारे जिनंद ५ ॥५॥

उपाध्याय आचार्य्य हमारे,
सकल संत जन धर्म दुलारे।
पाँचों पद विस्तारे मेरे प्यारे जिनंद ॥ ६ ॥
गुरु निर्ग्रंथों ने सिखलाया,
यों नवकार मंत्र बतलाया।
"सूर्य्य भानु" स्वीकारे, मेरे प्यारे जिनंद ॥७॥
तन मन तुम पर वारे मेरे प्यारे जिनंद मेरे प्यारे जिनंद ॥

३

संपूर्ण-जिन भक्ति

(तर्ज—अल्ला हू अल्ला हां)

मेरे तो सहारे जिनवर हैं, जिनवर है ३ ॥ ध्रुव ॥

ऋषभ अजित सभव अभिनन्दन,
सुमति पद्म सुपार्श्व चंदन।
दीनो के दुलारे जिनवर हैं३ ॥१॥

सुविधि सितल सिरि यंस जिनेश्वर,
वासु पूज्य सिरि विमल मुनीश्वर।
अनंत शिवपुर वारे जिनवर हैं३ ॥२॥

धर्म शांति कुंथु अर स्वामी,
मल्लिनाथ मुनि सुव्रत नामी।
नेमि नमिश्वर प्यारे जिनवर हैं३ ॥३॥

पार्श्वनाथ सिरि महावीर प्रभु
ग्यारह गणधर विहरमान विभु।
ये शासन रखवारे जिनवर हैं३ ॥४॥

अजर अमर अखिलेश निरंजन,
मुनि मन रंजन भव दुःख भंजन।

सिद्ध सुपद को धारे जिनवर हैं२ ॥५॥

उपाध्याय आचार्य हमारे,
सकल संत जन धर्म दुलारे।
पांचों पद विस्तारे जिनवर हैं२ ॥६॥

गुरु निर्ग्रन्थों ने सिखलाया
यह नवकार मन्त्र बतलाया
'सूरज भानु' हमारे जिनवर हैं२ ॥७॥

४५

सिद्ध-जिन

(तर्ज-होली)

सिद्ध पद ध्याओ रे भविजन, सच्चा आनंद मनाओ, रे,
सिद्ध पद ध्याओ, रे ॥ ध्रुव ॥
पाचों विषयों मे रचि पचि क्यों अपनी शान गंवाओ रे
परमारथ पाकर सामारिक दुख हटाओ रे ॥ सिद्धपद०१ ॥
चंचलता को दूर निवारो, निश्चल मन बन जाओ रे;
दर्पण सम चित माहि, ब्रह्म का रूप लखाओ रे ॥२॥
आगम वेद पुरान शास्त्र का सार समझ गुण गाओ रे,
आत्म गुणों का अनुभव कर-के, लगन लगाओ रे ॥ ३ ॥
दर्शन ज्ञान अनन्त अटल संस्थान अतुल बल पाओ रे
निराकार लघु गुरू विहीन; गुण को प्रकटाओ रे ॥४॥
निर्विकल्प, निर्लेप, निरामय, निर्मल तम कहलाओ रे,
'सूर्य भानु' गुरु निर्ग्रन्थो पर प्रेम जमाओ रे ॥ ५ ॥
सिद्ध पद ध्याओ रे भविजन सच्चा आनंद मनाओ रे,
सिद्ध पद ध्याओ रे ।

५

सिद्ध जिन

(तर्ज—ला, ला, ला दिल जान, भर २ जाम पिला गुललाला

बनादे मतवाला)

जय······जय······जय भगवान—

अज़र अमर अखिलेश निरंजन जयति सिद्ध भगवान ॥ध्रुव

अगम, अगोचर, तू अविनाशी,

निराकार, निर्भय सुख—राशी।

निर्विकल्प, निर्लेप निरामय निष्कलंक निष्काम ॥ जय० ॥१

कर्म न काया मोह न माया,

भूख न तिरखा रंक न राया।

एक स्वरूप अनूप अगुरुलघु निर्मल ज्योति महान ॥जय०२।

हे, अनंत ! हे, अंतरयामी;

अष्ट गुणों के धारक स्वामी।

तुम विन दूजा देव न पाया त्रिभुवन से उपराम ॥जय०॥३॥

गुरु निर्ग्रंथो ने समझाया;

सच्चा, प्रभु का, रूप बताया।

अब तुम मे ही मिल जाऊँ मैं ऐसा दो वरदान ॥जय०॥४॥

' सूर्य्य भानु ' है शरण तुम्हारी

मेरी करना प्रभु रखवारी।

मुझ में तुझ मे भेद न पाऊँ, जय २ कृपानिधान ॥जय०॥५

जय 'जय जय' भगवान—अजर अमर अखिलेश निरंजन

जयति सिद्ध भगवान ॥ मिलत ॥

सिद्ध जिन

(तर्ज—आखिर नार पराई है)

मेरे मन में आना रे, अपना रूप दिखाना रे ॥ ध्रुव ॥

जब मैं तेरा ध्यान लगाऊँ;
बस तुझ को ही तुझ को पाऊँ ।
ऐसी लगन लगानारे, अपना० ॥ १ ॥

तन मन धन तुम पर विसराऊं;
तेरा ही प्रभु ! अंश कहाऊं ।
ज्योति में ज्योति मिलाना, रे, अपना० ॥ २ ॥

तेरी है प्रभु अकथ कहानी,
हारे ब्रह्मा विष्णु भवानी ।
निर्गुण को समझाना रे; अपना० ॥ ३ ॥

सोहं ब्रह्म नित्य अविनाशी,
अशरण-शरण, सदा सुखराशी ।
जन्म रू मरण मिटाना, रे, अपना ॥ ४ ॥

गुरु निर्गन्थ ज्ञान बतलाया,
"सूर्य्य भानु" ने भजन सुनाया ।
निर्भय पद पहुंचाना रे, अपना० ॥ ५ ॥

मेरे मन में आना, रे, अपना रूप बताना, रे, ॥ मिलन॥

७

देव

(तर्ज—पितु मातु सहायक स्वामि सरन तुमही इक नाथ हमारे हो)

जिन-पति, जिन-वर, जगदीश, नाथ, तुमही, इक इष्ट हमारे हो
अज, अजर, अमर, अखिलेश, निरंजन, भव-भय-भंजन हारे हो॥ध्रु.
शुभ गुणागार वरमानतार, जग-जीवन, प्राण हमारे हो,
महिमा तुम्हार, पावे न पार, सुरगुरु सरिसहु बुध हारे हो॥१
कर काम क्रोध मद लोभ हान, शुभ शुक्ल ध्यान को धारे हो,
करुणा निधान, संपूर्ण ज्ञान, की संपति के अधिकारे हो॥२
कर क्षीण मोह अरु द्रोह कर्म-सदोह विदारन हारे हो,
भय-कारि भवोदधि माहि परे जीवों के एक सहारे हो॥३
जँह लौं आकाश अनस्थित है, तंह लौं महिमा विस्तारे हो,
श्री सकल संघ के "अर्यभानु" तुमही इक रच्छन हारे हो॥४
जिन-पति जिनवर जगदीश नाथ तुम ही इक इष्ट हमारे हो,
अज, अजर, अमर, अखिलेश, निरंजन, भव भय-भंजन हारे हो
अक्षय ज्ञान सुधा-निधि दूषण गण से रहित गिरा गुण खान।
वृंदारक-पति-पूजित मंगल मय हो सदा वीर भगवान॥

८

गुरु

तर्ज–गजल ताल धमाल, अगर हम वागवां होते तो गुलशन...

पंच आचार के स्वामी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ ध्रुव ॥
पंच इन्द्रिय विजय कर के, हुए जो विषय के त्यागी,
जो नवविधि शील के धारी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ १ ॥
चतुर्विध तज कषायों को, बने संयम के अनुरागी;
करें शासन की रखवारी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ ३ ॥
त्रिगुप्ती युक्त पांचों महाव्रतों को शुद्ध जो पालें,
विमल श्रुत ज्ञान है भारी धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ ३ ॥
अहार निर्दोष लाते हैं, बयालिस दोष को टाली,
वानि जिनराज की प्यारी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ ४ ॥
भजो निर्ग्रन्थ गुरुओं को, सकल श्री संघ हितकारी,
यह 'सूरजभानु' बलिहारी, धन्य गुरु-देव उपकारी ॥ ५ ॥
पंच आचार के स्वामी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ मिलत ॥

पाप-पराल पुंज प्रज्वालक पावक पावन पुण्य प्रधान
होवें मंगल रूप निरन्तर, सद्गुरु सच्चे-दया-निधान ॥

६

धर्म

(तर्ज—पहाडी धुन हमारे वशी वाले से नाहिं वनेगी)

धरम है हमारा औ हम हैं धरम के ॥ ध्रुव ॥

समझे जग के सुख सब ठग हैं ।
ठगाये गये हम मारे करम के ॥धरम०॥१॥

रीझे हुए थे मनोहर तन पे,
भरे मांस मज्जा रुधिर औ चरम के ॥धरम०॥२॥

पा गये वस्तु हमारी हमीं मे;
फिरते फिरे, मारे मारे भरम के ॥धरम०॥३॥

गुरु निर्ग्रन्थ मिले उपकारी;
सुनाये वचन हमको पूरे मरम के ॥धरम०॥४॥

मोहनींद से तब हम जागे,
सुन्न हुए अब मारे शरम के ॥धरम०॥५॥

'सूर्य भानु' अनुभव प्रकटाये,
जान गये गुण पुरुष परम के ॥धरम०॥६॥

धरम है हमारा औ हम हैं धरम के ॥ध्रुव॥ मिलत॥

जन्म मरण दुख जगत में, जागो रे मति मान ।
'सूर्यभानु' आराध लो, जैन धर्म गुण खान ॥

१०

जिन-वाणी

(तर्ज—सुखकर दुख हर प्रणत पाल प्रभु जय रघुराई जय जय)

जय कल्याणी, जय सुखदानी, जय जिनवानी, जय, जय ।।ध्रु०

महावीर मुख कमल प्रकाशी,
सुमिरत सब दुख जावे नाशी ।
नमस्कार सौबार करूं मैं जय गुण-खानी जय, जय ।।१।।

स्यादवाद गल हार विराजै,
सप्तभंगी नय भूषण भ्राजै ।
माला दया धर्म की साजै, जय जग-मानी जय, जय ।।२।।

तेरे लिये देव गण तरसें,
तीर्थंकर मुख अमृत बरसै ।
मोह कर्म जल जाय मूल से जिसने ठानी, जय, जय ।।३।।

भजन कियाँ करमन दल भागे,
दिव्य ज्ञान की ज्योतिहु जागे ।
पावै अटल अचल अक्षय सुख सब जग प्राणी जय, जय ।।४।।

अब कर्म दावानल तायो,
'डांगी सूरज' शरणे आयो ।
भवसागर से पार उतारो, जय महारानी, जय, जय ॥५॥
जय कल्याणी, जय सुख-दानी, जय जिनवानी, जय, जय ॥मि०

अजर अमर करते हमें, अमृत सम जिन बैन,
सच्चे सुख-दाता सदा, आराधौ दिन रैन ॥

११

सिद्धांत

(तर्ज—श्यामकल्याण, श्री राधे रानी दे डारो नी वंसरि मोरी)

प्रभु ने जो देखा सो होई ॥ ध्रुव ॥

आरत ध्यान करत जो निशि दिन;
है अति मूरख सोइ ॥ प्रभु० ॥ १ ॥

अपने पुरुपारथ का प्यारे;
दंभ करो मत कोइ ॥ प्रभु० ॥ २ ॥

व्यर्थ विचारों में रचि पचि के;
क्यों मरते हो रोइ ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

होना हो सो होय रहेगा;
डारहु चिन्ता धोइ ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

इस जग में सब ने ही भोगे,
सुख दुख के फल दोइ ॥ प्रभु० ॥ ५ ॥

'सूर्य्यभानु' अल-मस्त रहो सब,
निज पद मँह मन पोइ ॥ प्रभु० ॥ ६ ॥

प्रभु ने जो देखा सो होइ ॥ मिलत ॥

१२

पार्श्व-चरित्र

तर्ज—पचरगी द्रोपा)

धन 'अश्वसेन' नृप धन 'वामा' महारानी,
महाराज, पुत्र पारस को पाये जी;
धन 'काशि नरेश कुमार' नाथ त्रिभुवन मनभाये जी॥ध्रुव

१

निज शयनागार सजा सोई महारानी,
महाराज, उसे सुख निद्रा आई जी,
देखे चौदह शुभ स्वप्न सुनो सब ध्यान लगाई जी ॥
गज उज्जवल, श्वेत वृषभ, देखा वनराई,
महाराज, देख लक्ष्मी सुख पाई जी,
लख सुमन माल, रवि, शशि, दर्शन कर अति हरषाई जी ॥
नभ मडल मे फिर ध्वजा एक फहराई;
इक कलश कमल सरवर भी दिये दिखाई।
लख पयनिधि, सुर विमान, फूले न समाई;
फिर रत्न राशि, अरु, अग्नि शिखा दरसाई।
पति शय्या पर जाय, दिये स्वप्न सुनाय,
नर पति हरषाय, कहा मन मे विचार ॥२॥

प्रिये ! पुत्र ऐसा प्रकटेगा,
जो भव भव के रोग हरेगा।
या होगा छः खंडी स्वामी;
या होगा तीर्थङ्कर नामी॥

ईसा से आठ सौ वर्ष पूर्व हे स्वामी;,
महाराज, आप भारत में आये जी, धन 'काशी नरेश कुमार" नाथ त्रिभुवन मन भाये जी॥ १॥

२

धन पौष मास धन कृष्ण पक्ष सुखदाई,
महाराज, धन्य दशमी तिथि आई जी,
अव तीर्ण हुए तेइसवें तीर्थङ्कर जिन-राई जी॥
कंपाय मान निज आसन लख सुरराई, महाराज विचारे ज्ञान लगाई जी प्रभु जन्म समझ कर तुरत सुघोषा घंटि बजाई जी।

सुर असुर इन्द्र इंद्राणी मिल कर आवें;
अपना पूरा सौभाग्य समझ सुख पावें।
नाचे दे २ ताल रागिनी गावें;
कनकाद्रि शृंग पर जा प्रभु को नवराये॥

अपना कर्तव्य कर; रक्खा चरणों में सर;
सुर गये निज घर; हुआ उत्सव महान २॥

बंदी दुर्जन दिये छुटाई,
घर २ सुख प्रद बँटत वधाई ।
उस छवि को हम कैसे गावें,
जिसका सुर गुरु पार न पावे ॥
क्या कहूं ? नाथ, माता, मन मे हर्षानी,
महाराज, पुण्य के फल प्रकटायेजी,
धन काशि नरेश कुमार नाथ त्रिभुवन मन भाये जी ॥२॥

३

रमते रमते इक दिन गंगा तट आये,
महाराज चरण से नदी छुआनी जी,
तब से सुर-सरिता का कहलाता, निर्मल पानीजी ॥
पारस प्रभु के उन चरण कमल को ध्याओ,
महाराज, महा मंगलमय मानी जी
जिनके प्रभाव से आज अहो गंगा पूजानी जी ॥
उस तट पर टोगी एक तपस्वी आया,
उसने अपना आडम्बर खूब बनाया,
राजा को भी लोगो ने जाय सुनाया,
दर्शन कर के वह भी मन मे सुख पाया ॥
भोले, योगी, प्रकार कहे पारस कुमार,
तप तेरा असार अरे ज्ञान विचार २

नाग नागिनी जलते भाई
काष्ठ चीर प्रत्यक्ष दिखाई ।
योगी अपनी शान गंवाई,
क्रुद्ध हुआ सुध बुध विसराई ॥
नव पद दे नाग नागनी को उद्धारा,
महाराज इन्द्र इन्द्राणि बनाये जी ॥
धन काशि नरेश कुमार, नाथ त्रिभुवन मन भायेजी ॥३॥

४

फिर तीस बरस तक गृहस्थ धर्म निभाया,
महाराज, जगत निस्सार लखाया जी
फिर नगर बनारस निकट सकल जंजाल हटाया जी ॥
दीक्षा भगवति की धार सत्य सुख पाया,
महाराज धर्म का मार्ग सुहायाजी,
बन कमठ सुर उस योगी ने उपसर्ग मचायाजी ॥
मूसलाधार जल रज़ बरसा बरसाई ।
भय-प्रद प्रेतों को छोड़ त्रास दिखलाई ॥
उस पापी ने पर्याप्त व्याधि पहुंचाई;
उल्टे उस पर यम ने तलवार चलाई ॥
नहिं क्रोध लिगार, प्रभु के दिल मंझार,

क्षमा कर दी अपार, धन धन जिनराज २

धन धरणेन्द्र देवकी माया ।
द्रव्य दुःख प्रभु का विसराया ॥
केवल ज्ञान आप प्रकटाया;
भाव दुःख को दूर भगाया ।

अचला विमला केवल कमला को पाई,
महाराज वीतरागी कहलाये जी
धन 'काशि नरेश कुमार' नाथ त्रिभुवन मन भाये जी ॥
द्रुम 'अशोक' के नीचे प्रभु आप विराजे,
महाराज, सुर सुमन वृष्टि रचाई जी;
पंतिम विधि वानी शिवसुखदानी आप सुनाई जी ।
प्रभु चरण कमल कर स्पर्श ऊर्ध्व गति पावें,
महाराज, चमर युग रहे सिराई जी,
उस रतन जटित सिंहासन पर प्रभु मूर्ति सुहाई जी ॥

तन का प्रकाश भामंडल रूप बनाया,
देवों ने नभ में दुंदुभि शब्द बजाया,
सब भजो त्रिलोकीनाथ, त्रिछत्र धराया।
आठों प्रतिहार्य्य सुनाय सत्य-सुख पाया ॥

सत गुरु निरग्रंथ, समझाया शिव पंथ, कर निगमों का मंथ, धन २ गुरुराज, धन धन गुरु राज ॥

चिन्तामणि पारस को ध्याओ;
भव भव में आनंद मनाओ।
पारस लोह सुवर्ण बनावे;
"पारस" निज सम सुख प्रकटावे॥
यह 'सूर्य भानु' प्रभु पर बलिहारी जावें,
महाराज, चरण में शीश झुकाते जी,
धन 'काशिनरेश' कुमार, नाथ, त्रिभुवन मन भाये जी ॥५॥
धन 'अश्वसेन' नृप धन 'वामा' महारानी,
महाराज, पुत्र पारस को पाये जी ।
धन 'काशीनरेश' कुमार नाथ त्रिभुवन मन भाये जी॥मिलत

१३

भगवती मल्लि

तर्ज—तेरी कुदरत की गुल क्यारी, कायम है फुलवारी, फूल रही है कैसी ये फुलवारी वारी बलिहारी, तेरी कुदरत की गुल क्यारी [नाटक की रगत]

जयति जयति मल्लि कुमारी, जय भगवती हमारी,
तीर्थंकरी जगत उद्धारन
हारी वारी बलिहारी, जयति २ मल्लि कुमारी ॥ ध्रुव ॥

'कुंभ' पिता की एक दुलारी,
'प्रभावती' माता की प्यारी।
तुम समान को हुई न नारी,
जय जय जग महतारी वारी बलिहारी० ॥१॥

रूपवती अति मोह निवारी,
हुई स्वयंवर की तय्यारी।
छः राजा मोहे अति भारी,
आये सभा मंझारी वारी बलिहारी० ॥२॥

पुतली तुमने एक बनाई,
अन्न कौर से उसे भराई।
दरसन खोल उन्हें समझाई,
तन की अशुद्धताई ..वारी बलिहारी० । ३ ॥

वरसी दान दियो श्री कारी;
दान महात्म्य बताया भारी।
जैनी दीक्षा को अवधारी,
थापे तीरथ चारी...वारी बलिहारी० ॥ ४ ॥
जग में जीव अनेकों तारी;
नारि जाति प्रतिभा विस्तारी।
मोह दशा को दूर निवारी,
पहुंची मोक्ष मंझारी...वारी बलिहारी०॥५॥
गुरु निर्ग्रन्थों ने समझाई,
तेरी महिमा हमें बताई।
सकल संघ अविचल निधि पाई;
'सूरज भानु' सुनाई...वारी
बलिहारी; जयति जयति मल्लि कुमारी,
जय भगवती हमारी ॥ तीर्थंकरी,
जगत उद्धारन हारी...वारी बलिहारी
जयति जयति मल्लि कुमारी ॥६॥

१४

धर्म के नाम पर

तर्ज—मरना है इक रोज क्यों ना मेरे वतन की शान पर हाँ मेरे वतन की शान पर मेरे प्यारे हिन्दोस्तान पर, मेरे प्यारे हिन्दोस्तान पर मेरे सोने के हिन्दोस्तान पर।

मरना है इक रोज क्यों ना मेरे धरम के नाम पर,
हाँ, मेरे धरम के नाम पर मेरे जैन धरम के नाम पर,
मेरे दया धरम के नाम पर ॥ टेर ॥

महावीर प्रभु का गुण गावें,
कुत्सित देवों को न मनावें।
मेरे तन धन प्राण जिनेश्वर देव गुणों की खान पर, हाँ मरना०॥१

आओ जैनी वीरो आओ,
जैन धर्म पर बलि २ जाओ।
नाचें फिर इक रोज जिनेश्वर नाम धर्मी के जुबान पर, हाँ मरना०२

गन्द वृत्ति को कभी न छोड़ें
दया धर्म से मुख ना मोड़ें
फिर इक दिन फहरावे वीर का झंडा जगत जहान पर हाँ, म ॥३॥

पंच प्रमेष्ठी मन्त्र हमारा,
यही जान से हमको प्यारा।
होंगे सफली भूत भरोसा रखते हैं भगवान पर, हां, म.॥४॥
सुख दुःख में ना धर्म को भूलें;
सभी आफतों को हम सहलें।
श्रावक अरणाक जैसे अब हम जन्मे हिन्दोस्थान पर, हां, म.।५॥
सादा सीधा जन्म वितावें;
गुरु निर्ग्रन्थों को हम ध्यावें।
उछलें 'सूरजभान' सदा हम महावीर के नाम पर हां, म.॥६॥
मरना है इक रोज क्यों ना मरें धरम के नाम पर० ॥मिल्लत॥

१५

सच्चे जैनी

(तर्ज—झंडा ऊंचा रहे हमारा, विजयी विश्व तिरंगा प्यारा)

सर्व धर्म सम भाव दिखावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥ध्रुव॥

हिन्दू, मुसलमान, ईसाई,
सिक्ख, बुद्ध, सब ही है भाई;
सब ने प्रभु की महिमा गाई ।
सब को अपने गले लगावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥१॥

राम, कृष्ण अरु बुद्ध हमारे,
ईशु मुहम्मद धरम दुलारे ।
जैन धर्म को सब ही प्यारे;
आओ सब को शीष नमावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥२॥

जब २ जैसे कष्ट पड़े थे ।
अत्याचार असंख्य बढ़े थे ।
जो उन पापो से झगड़े थे;
उन को श्रद्धाजलि पहुँचावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥३॥

नर नारी गोरा या काला,
ऊँच नीच, बालक या बाला ।
गूँथे इन पुष्पों की माला;

सब को सम अधिकार दिलावें, सच्चे जैनी हम कहलावें।।४।।

वेद पुरान कुरान पढ़ावें,

सब धर्मों का मर्म बतावें,

उनमें प्रभु दर्शन करवावें ।।

तन मन धन 'जिन' पर विसरावें, सच्चे जैनी हम कहलावें।।५।।

सत्य दया का नाद गुँजावें,

विश्व प्रेम का राग सुनावें,

पक्षपात को दूर भगावें ।

'सूर्य्य भानु' निर्मल सुख पावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ।।६।।

१८

उपदेश

(तर्ज—भोले राजा निटरियां गोल रनकी बूंद मर)

भोले भाया भजन कर ले, उमरिया बीत रही ॥ध्रुव॥

छिन छिन में छीजत है काया,
माया में तू क्यों भर माया।
प्रभु का ध्यान धर ले, उमरिया बीत रही ॥ १ ॥

बड़े २ पृथ्वी पति स्वामी
रहे न कोई यहा मुकामी
सुजस का घट भर ले, उमरिया बीत रही ॥ २ ॥

क्रोध मान को दूर भगाले,
दया सत्य मे प्रेम लगा ले,
ईश्वर से डर ले, उमरिया बीत रही ॥ ३ ॥

दुर्लभ मानुस तन को पाया,
विषयों मे क्यों व्यर्थ गमाया।
अब सुकृत कर ले, उमरिया बीत रही ॥ ४ ॥

गुरु निर्ग्रन्थ ज्ञान बतलाया,
'सूर्य भानु' ने यो समझाया।
भव सागर तिर ले, उमरिया बीत रही ॥ ५ ॥

भोले भाया भजन कर ले उमरिया बीत रही ॥ भिनत ॥

१७

बच्चों का भजन

सुनो बच्चों की करुणा पुकार;
दीन बन्धु ! हैं शरण तुम्हारी।
और नहीं आधार;
सुनो शिशुगण की करुणा पुकार ॥ ध्रुव ॥
सूरज बन मन मंदिर आओ,
अंधकार अज्ञान नसाओ।
सब सुख के दातार ॥ १ ॥
सदाचार का पाठ पढ़ाओ,
जीवन का रहस्य समझाओ,
निर्गुण गुण भंडार ॥ २ ॥
देश दुखी है नाथ ! हमारा
'सूर्य भानु' हम बनें सहारा।
भर दो शक्ति अपार ॥ ३ ॥
सुनो हम सब की करुण पुकार;
दीन बन्धु हैं शरण तुम्हारी,
और नहीं आधार;
सुनो बच्चों की करुणा पुकार ॥मिलत॥

१८
वीर--जयंती

(तर्ज—उडा कर ले गया पक्षी मेरी जजीर सोने की)

आज महावीर स्वामी की जयंती हम मनाते हैं ;
सकल श्री संघ मिल कर के गुणों का गान गाते हैं ॥ध्रुव॥

धरम के नाम पर पापी, किया करते थे जन हिंसा,
दयामय धर्म बतलाया, उन्हीं का यश सुनाते हैं ॥१
नीच समझा था लोगों ने हमारी शूद्र जाति को;
उसी हरि केशि को संसार का स्वामी बनाते हैं ॥२
'पैर पैंजार' कह, स्त्री जाति का अपमान करते थे,
महामति चदना को मोक्ष मे सीधा पठाते हैं ॥३
परीषह घोर सहकर के उबारा, चंड कोशी को,
दुष्ट 'अर्जुन' को भी तारा, उन्हीं को सिर झुकाते हैं ॥४
इन्द्र ने यों कहा आकर, रहूँ मैं साथ रक्षा को,
कहा, अर्हत अपनी शक्ति से ही मुक्ति पाते हैं ॥५
अहो, श्री सघ मे स्वामी! ज्ञान के फूल खिल जावे,
विजय हो जैन शासन की भावना शुद्ध भाते हैं ॥६
अरे, इस 'सूर्य्य भानु' के सदा प्रभु ही सहारे हैं;
उन्हीं ही की कृपा से भजन सुंदर हम बनाते हैं ॥७
आज महावीर स्वामी की जयंती हम मनाते हैं,
सकल श्री संघ मिलकर के गुणों का गान गाते हैं ॥मिलत

१९

महावीर-चरित्र

(तर्ज—लावणी)

धन श्रीमद् वीर जिनेश्वर पर-उपकारी;
महि मंडल में मार्तण्ड, चरम अवतारी ॥ ध्रुव ॥
क्यों हो न ? आर्य्य व्रत देश गौरवा गारी;
जहां प्रकटें आय आप से जग हित-कारी ।
धन तात 'सिधारथ' 'त्रिशला दे' महतारी ॥
उत्पन्न किया नंदन, त्रिभुवन-भय-हारी;

॥ दोहा ॥

फैला था अज्ञान का अंधकार बरि वंड;
इसीलिये प्रकटित हुए थे, मार्तण्ड प्रचण्ड ।
पाखंड खंडि सर्वत्र करी उजियारी;
महि मंडल में मार्तण्ड चरम अवतारी ॥ १
धन वचन सुधा-माधुर्य्य अनूपम धारी;
भविजन-मन-मोहन-सदा शांति विस्तारी ।
सद् दया धर्म सुषमा सर्वत्र प्रसारी;
यह जैन-समाज रहेगी ऋणी तुम्हारी ॥

१८

उपदेश

(तर्ज—भोले राजा खिडकियां खोल रसकी बूंदे फरे)

भोले भय्या भजन कर ले, उमरिया बीत रही ॥ध्रुव॥

छिन छिन में छीजत है काया,
माया में तू क्यों भर माया।
प्रभु का ध्यान धर ले, उमरिया बीत रही ॥ १ ॥

बडे २ पृथ्वी पति स्वामी
रहे न कोई यहा मुकामी
सुजस का घट भर ले, उमरिया बीत रही ॥ २ ॥

क्रोध मान को दूर भगादे,
दया सत्य मे प्रेम लगा दे,
ईश्वर से डर ले, उमरिया बीत रही ॥ ३ ॥

दुर्लभ मानुष तन को पाया,
विषयों में क्यो व्यर्थ गमाया।
अब सुकृत कर ले, उमरिया बीत रही ॥ ४ ॥

गुरु निग्रन्थ ज्ञान बतलाया,
'सूर्य भानु' को यों समझाया।
भव सागर तिरले, उमरिया बीत रही ॥ ५ ॥
भोले भय्या भजन कर ले उमरिया बीत रही ॥ मिनत ॥

१७

बच्चों का भजन

सुनो बच्चों की करुण पुकार;
दीन बन्धु ! हैं शरण तुम्हारी ।
और नहीं आधार;
सुनो शिशुगण की करुण पुकार ॥ ध्रुव ॥
सूरज बन मन मंदिर आओ,
अंधकार अज्ञान नसाओ ।
सब सुख के दातार ॥ १ ॥
सदाचार का पाठ पढ़ाओ,
जीवन का रहस्य समझाओ,
निर्गुण गुण भंडार ॥ २ ॥
देश दुखी है नाथ ! हमारा
'सूर्य भानु' हम बनें सहारा ।
भर दो शक्ति अपार ॥ ३ ॥
सुनो हम सब की करुण पुकार;
दीन बन्धु हैं शरण तुम्हारी,
और नहीं आधार;
सुनो बच्चों की करुण पुकार ॥मिलत॥

१८
वीर--जयंती

(तर्ज—उड़ा कर ले गया पछी मेरी जंजीर सोने की)

आज महावीर स्वामी की जयंती हम मनाते हैं ;
सकल श्री संघ मिल कर के गुणों का गान गाते हैं ।।ध्रुव।।

धरम के नाम पर पापी, किया करते थे जब हिंसा,
दयामय धर्म बतलाया, उन्हीं का यश सुनाते हैं ।।१
नीच समझा था लोगों ने हमारी शूद्र जाति को;
उसी हरि केशि को संसार का स्वामी बनाते हैं ।।२
'पैर पैजार' कह, स्त्री जाति का अपमान करते थे,
महासति चंदना को मोक्ष मे सीधा पठाते हैं ।।३
परीषह घोर सहकर के उधारा, चड कोशी को,
दुष्ट 'अर्जुन' को भी तारा, उन्हीं को सिर झुकाते हैं ।।४
इन्द्र ने यों कहा आकर, रहूँ मैं साथ रक्षा को,
कहा, अर्हंत अपनी शक्ति से ही मुक्ति पाते हैं ।।५
अहो, श्री संघ में स्वामी! ज्ञान के फूल खिल जावे,
विजय हो जैन शासन की भावना शुद्ध भाते हैं ।।६
अरे, इस 'सूर्य्य भानु' के सदा प्रभु ही सहारे हैं;
उन्हीं ही की कृपा से भजन सुंदर हम बनाते हैं ।।७
आज महावीर स्वामी की जयंती हम मनाते हैं;
सकल श्री संघ मिल कर के गुणों का गान गाते हैं ।।मिलत

१९

महावीर-चरित्र

(तर्ज—लावणी)

धन श्रीमद् वीर जिनेश्वर पर-उपकारी;
महि मंडल में मार्तण्ड, चरम अवतारी ॥ ध्रुव ॥
क्यों हो न ? आर्य्य व्रत देश गौरवा गारी;
जहां प्रकटें आय आप से जग हित-कारी ।
धन तात 'सिधारथ' 'त्रिशला दे' महतारी ॥
उत्पन्न किया नंदन, त्रिभुवन-भय-हारी;

॥ दोहा ॥

फैला था अज्ञान का अंधकार वरि बंड;
इसीलिये प्रकटित हुए थे, मार्तण्ड प्रचण्ड ।
पाखंड खंडि सर्वत्र करी उजियारी;
महि मंडल में मार्तण्ड चरम अवतारी॥१
धन वचन सुधा-माधुर्य्य अनूपम धारी;
भविजन-मन-मोहन-सदा शांति विस्तारी ।
सद् दया धर्म सुषमा सर्वत्र प्रसारी;
यह जैन-समाज रहेगी ऋणी तुम्हारी ॥

॥ दोहा ॥

अजर अमर ससार मे वर्द्धमान भगवानः
जिन की वाणी है अभी,तारण तरणि समान।

धन दर्शन ज्ञान सुसंपति के अधिकारी,
महि मंडल मे मार्तण्ड चरम अवतारी ॥२॥

होती पशु हिंसा धर्म नाम पर भारी,
उस देश व्याप्त हत्या को दूर निवारी ।
पैरो की जूति कहाती थीं जब नारी;
तब चंदनबाला भेजी मोक्ष मंझारी ॥

॥ दोहा ॥

शूद्रों को पैरो तले, कुचल रहे जब हाय,
उसी समय हरिकेशि को बना दिया मुनिराय।

सब शीप झुकाते दंभी अत्याचारी,
महि मडल मे मार्तण्ड चरम अवतारी ॥ ३ ॥

बोला जब इन्द्र जिनेन्द्र शब्द उच्चारी,
मै रहूं साथ अब कष्ट पड़ेगे भारी ।
तब बोले दीनानाथ ! उसे ललकारी,
सुर राज ! वचन बोलो तुम जरा विचारी ।

॥ दोहा ॥

तीर्थंकर की शक्ति का, क्या न तुम्हें है ज्ञान ।
स्वाभिमान की मूर्ति हैं, हमको लो पहचान ॥

काटेंगे हमारे कर्म हमीं असुरारी,
महि मंडल में मार्तण्ड चरम अवतारी ॥ ४ ॥
गौतम से ग्यारह पंडित विद्या धारी,
जो पांच २ सौ शिष्यों के परिवारी ।
सब बने साथ अणगार पंच आचारी;
थे जिन-शासन के "सूर्य्य भानु' रखवारी ॥

॥ दोहा ॥

गुण जिनराज अनेक हैं तारण तिरण जहाज,
यथा शक्ति उल्लास से, स्वल्प सुनाये आज ॥

नहिं अधिक और कहने की शक्ति हमारी।
महि मंडल में मार्तण्ड चरम अवतारी ॥ ५ ॥
धन श्रीमद् वीर जिनेश्वर पर-उपकारी,
महि मंडल में मार्तंड चरम अवतारी ॥ मिलत ॥

जिन भक्ति

तृतीय खण्ड

१

आज है तो कल नहीं

(हरि गीतिका)

फूल कल उद्यान में फूला फला, देखा, अहो,
आज 'सूरजभान' वह कुम्हला गया क्यों कर, कहो।
एक सा होता कभी संसार का प्रति पल नहीं,
यह दशा अपनी, समझलो, आज है तो कल नहीं ॥१॥

तीव्र किरणों से दिवाकर विश्व को चमका रहा,
शाम को वह ढ़ल गया, हमको यही सिखला रहा।
सोच 'सूरजभान' सूरज भी सदा निश्चल नहीं;
यह दशा अपनी समझलो आज है तो कल नहीं ॥२॥

आज तो देखा जिन्हें था राग रंग उमंग में,
कल उन्हें हमने निहारा, सिर पटकते दंग में;
देख 'सूरजभान' सुख दुख, अनवरत अविचल नहीं,
यह दशा अपनी समझलो, आज है तो कल नहीं ॥३॥

मान मत करना कभी अपने विभव धन धाम का,
याद 'सूरजभान' करना, नाम रावण राम का।

तीन खंड नरेश को मरते समय था जल नहीं;
यह दशा अपनी समझलो, आज है तो कल नहीं ॥४॥

मिल गया नर-जन्म दुर्लभ छोड राग-द्वेष को,
कृष्ण-गीता के अनोखे याद कर उपदेश को ।
कर्म 'सूरजभान, कर पर हाथ तेरे फल नहीं;
यह दशा अपनी समझलो आज है तो कल नहीं ॥५॥

२

संसार

अपनी सुख दुख की लीला से बना हुआ सारा संसार ॥ ध्रु॥

अणु २ परिवर्तित है प्रतिपल।
इसीलिए कहलाता चंचल।
सत्व रूप से अचल, विमल है नित्या नित्य विचार,
अपनी सुख दुख की लीला से बना हुआ सारा संसार ॥१॥

अभी जन्म है अभी मरण है,
अभी त्रास है अभी शरण है।
धूप छांह सम हास अश्रुमय जीवन का संचार,
अपनी सुख दुख की लीला से बना हुआ सारा संसार ॥२॥

अभी बाल है अभी युवा है,
अभी वृद्ध है अभी मुवा है।
कैसा रे, परिवर्तन मय है यह निष्ठुर व्यापार,
अपनी सुख दुख की लील से, बना हुआ सारा संसार ॥३॥

यहां कहां रे, शांति चिरंतन
कर्म दलों का निविड़ निबन्धन।
'सूर्यभानु' है संग निरंतर सृजन और संहार;
अपनी सुख दुख की लीला से बना हुआ सारा संसार ॥४॥

३

लाख बात की है एक बात

(मनहर)

दीवानी मे नाहि फौजदारी हू मे नाहि,
नाहि राज कचेहरी हू की पाया जी हुजूरी मे ।
मास्टरी मे नाहि कछु डाक्टरी मे नाहि,
औ क्लेक्टरी मे नाहि नाहि कलर्क की मजूरी में।
वैरिस्टरी माहि नाहि नाहि वेक्सीनेटरी मे,
सेठ हूकी किसी फेक्टरी की मैनेजरी मे ।
"सूर्य्य भानु लाख बात की है यह एक बात,
सब सुख पाया एक संतोष सबूरी म ॥१॥
मिश्री में न पाया मधु माखन मे पाया नाहि,
दाखन मे पाया नाहि लाख लाख लेखिये ।
पाया न मयूख मे पीयूख हू मे पाया नाहि,
चूंख चूंख ईख हू को चाहे आप फेंकिये ।
सुधा मे न पाया सुधा, पान कर हारा मै तो,
नहीं पाया प्यारी के अधर चूम पेखिये ।
'सूर्य्यभानु' लाख बात की है यह एक बात,
सब रस पाया जिनवाणी सुन देखिये ॥२॥

इन्द्र न सुहात, धरणेन्द्र न सुहात,
चमरेन्द्र न सुहात सिकरेन्द्र न सुहात है।
नरेन्द्र न सुहात, न महेन्द्र हू सुहात रंच,
चन्द्र न सुहात दिवसेन्द्र न सुहात है।
संसार के और सुख वैभव सुहात नाहिं,
कुबेर को कोष हू तो कुछ न सुहात है।
सूर्य्यभानु' लाख बात की है यह एक बात,
नाथ-नाथ त्रिशला को तात मन भात है ॥३॥

(छप्पय)

जहँ तहँ मिलैं अनेक, शास्त्र पढ़कर समझाते,
जहँ तहँ मिलैं अनेक राग और रंग सुनाते।
जहँ तहँ मिलैं अनेक नितनये ढोंग बनाते,
जहँ तहँ मिलैं अनेक चमत्कारी कहलाते।
'सूर्य्यभानु सब ही मिलैं, अपनी २ टेक,
आतम ज्ञानी ना मिलै लाख बात की एक॥४॥
मिलै निरोग शरीर मिलै अन गिनत सहारे,
मिलै धरा धन धाम मिलै परिवार पियारे।
मिलै राज और पाट मिलै अधिकार निराले,
मिलै जगत के वे दुख मय सुख वैभव सारे।
'सूर्य्यभानु' सब ही मिलै काम न सुधरे नेक,
आत्म तत्व पाया नहीं लाख बात की एक॥५॥

४

कौम के खातिर

(मनहर)

कौम के खातिर श्री 'निकलंक' जू,
बौद्धों के हाथ से प्राण गवांवे
कौम के खातिर 'गोविन्द' के सुत,
जीते जी द्वार में जाय चुनावें।
कौम के खातिर राणा 'प्रताप' जू,
जंगल जंगल कष्ट उठावें।
'सूरजभानु' तू है मुरदा कुछ,
कौम के खातिर काम न आवें।१।

कौम के खातिर 'सेनयतीन्द्र' जू
भारत पै बलिदान चढ़ावें,
कौम के खातिर छात्र 'गणेश' जू
जन्म की भूमि पर स्वर्ग सिधावें।
कौम के खातिर 'मोहन गांधि' जू
जीवन का सर्वस्व लगावें।
सूरजभानु तू है मुरदा कुछ
कौम के खातिर काम न आवें।२।

५

आवसी

पायो अभिराम वाम ठाम २ नाम पायो,
  पायो विसराम पायो धनधाम राजसी,
सुख को सामान पायो, अधिक आराम पायो,
  पर यह प्रीति मधु भीनी तलवारसी।
वर्द्धमान भगवान भजले अरे, सुजान,
  याद रख लेना न तो पीछे पछतावसी।
मान मान मान, कहे डांगी 'सूर्य्यभानु,' सुन
  खोयो नर जन्म फेर हाथ नहिं आवसी ॥

महिमा जिन राज की

कहत कहत मुनिराज कविराज हारे,
कीरति कलाप भनि जन सिर ताज की ।
लिखत २ सुर गुरुराज कहत अपार गुण
गण गाथा गरीब निवाज की ।
सुनत सुनत महावीर के निराले जस,
चकित भई है मति सुजन समाज की ।
'सूरजभानु' आज तोहे तनिक न आई लाज,
कहने के काज रे, महिमा जिनराज की ॥

७

विनय

मम हृदय कमल विकसित कर, रे, ॥
यह विनय विमल उर में धर, रे, ॥ध्रुव॥

दिनकर बन कर सघन गगन पर
रुचिकर मन-हर अरुण वरण भर।
अंतर में छिपकर अन्तर-तर,
चमक अचंचल चिर स्थिर, रे,
मम हृदय कमल विकसित कर, रे ॥१॥

स्नेह-सुधा का स्रोत बहा दे,
शिव सुख मय सुषमा सर सा दे।
लोल ललित लहरी लहरा दे,
विप्लव मय जीवन भर रे,
मम हृदय-कमल विकसित कर रे ॥२॥

शत्रु मित्र पर एक भावना,
त्रिभुवन की कल्याण कामना,
"सूर्यभानु" की यही प्रार्थना,
विहरित करना घर घर रे,
मम हृदय कमल विकसित कर रे ॥३॥

मम हृदय कमल विकसित कर रे,
यह विनय विमल उर में धर, रे ॥मिलत॥

८

दिव्य-संदेश

अंधी श्रद्धा को जड से, सब खोद बहाओ, श्रय पुण्येशः
हो स्वतंत्र श्रम करो सदा, पाओगे तुम साफल्य विशेष ।
कर्मवीर बन कर विचरो, अति धीर महा गंभीर महेश;
ज्ञात पुत्र श्री वर्द्धमान के सुन लो अतुल दिव्य संदेश ॥१॥

द्रव्य भाव हिंसा को त्यागो त्यागो फूट कपट अरु क्लेश;
सादा खाओ सादा पीओ, सादा रक्खो अपना वेश ।
क्रम से क्रम से चढो तभी चढ पाओगे तुम सिद्धि नगेश ।
ज्ञात पुत्र श्री वर्द्धमान के सुनलो अतुल दिव्य संदेश ॥२॥

सत्य धर्म के हेतु कटे चाहे अपना सिर क्यों न हमेश,
प्यारो ! कटाओ प्रसन्नता से, मत डरो कभी लवलेश ।
अरे, सहायक है हम सब का एक वही नव पद मन्त्रेश,
ज्ञात पुत्र श्री वर्द्धमान के सुनलो अतुल दिव्य संदेश ॥३॥

पर उपकार करो तन मन से रहे न कोई श्रम अवशेष;
पर न करो अभिमान रंच, कहलाओगे तुम सभ्य नरेश ।
करो नहीं निंदा दुष्टो की, दुष्ट प्रकृति की तोड़ो रेश,
ज्ञात पुत्र श्रीवर्द्धमान के, सुनलो अतुल दिव्य संदेश ।

राग द्वेष को दूर भगाकर, तजो कदाग्रह का भलमेश;
फिर तज दो झट दर्शन अरु चारित्र मोहनी कर्म महेश।
उसी समय उग जाय हृदय में केवल ज्ञान रूप दिवसेश;
ज्ञात पुत्र श्री वर्द्धमान का सुनलो अतुल दिव्य संदेश।
जर्जर बाकी कर्म जला कर, बन सकते हो सिद्ध जिनेश,
बन जाओगे पूर्ण ज्ञान सुख जल के अति गंभीर जलेश।
जन्म मरण विनिमुक्त कहाओगे, डांगी 'सूरज' अखिलेश;
ज्ञात पुत्र श्री वर्द्धमान के सुनलो अतुल दिव्य संदेश॥

६

जुरती नहीं जोरी

(मनहर)

टूटी हार जुरी जाये, कोई तदबीर हू ते,
जुरिजाये चाहे कैसे मोती हू की मनियां।
टूटी फूटी काच की कटोरी चाहे जुरिजाय,
जुरि जाये चाहे टूट हरि हू की कनियां।
पत्थर की शिला चाहे सिम्मट से जुरि जाये,
जुरि जाये तीरपी २ लोह हू की अनिया।
"सूर्यभानु' एती टूटी जुरती हू जोरी पै,
जुरति नहीं जोरी टूटी मन केरी तनिया॥

१०

देश महिमा

(चलत)

जय जय प्यारा हिन्दोस्थान

जिसने पैदा किये हमारे वर्द्धमान, गौतम गुण खान,
आनन्द कामदेव से गृहपति, बाहुबलि से विक्रम महान् ।
धन्ना जैसे महा तपस्वी, शिवि मुनि जैसे दया प्रधान,
हरिश्चन्द्र से दानवीर थे, मेघरत्थ से त्यागी जान ॥
अरणाक जैसे धर्म धीर, ध्रुव, ढंढण जैसे दृढ़ प्रणवान ।
कपिल दधीचि वशिष्ठ अत्रि से ऋषि प्रवर थे ज्ञान निधान,
भीष्म पिता अरु सेठ सुदर्शन, अतुल ब्रह्मचारी पहचान ।
अर्जुन भीम पवन-सुत से थे, बड़े २ भारी बलवान ।
हेमचन्द्र अरु उमा स्वामि से थे, आचार्य महा विद्वान ।
जिन्हें देख कर दूर भागता था, पाखण्ड मोह मद मान ॥
बड़े बड़े ऋषि मुनि यति तपसी, धर्म मर्म पारंगत, जान,
जिनसे प्यारा देश हमारा, कहलाता था स्वर्ग समान ॥
भोज विक्रमादित्य मोरध्वज, अकबर जैसे थे सुलतान,
कालिदास से महा कविश्वर, गाते थे जिनका गुणगान ।

जिसमे प्रकृति छटा छहराई के कि वृन्द की केक महान् ।
अलि कुल कलरव करत सदा अरु कोकिल करती सुन्दर गान ।
सर सर सरती सरस सुर सरित सूर सुतासर सती सुसान ।
सुरसा सरस सरसती सरसो मरस रसिक सामी पहिचान ।
डांगी 'सूरजभानु' यहां थे कैसे रे, आदर्श महान ।
देख छटा इस भारत माता की विस्मित था सर्व जहान ॥

जय जय प्यारा हिन्दोस्थान

श्रावण शुक्ला ३
१९८४

सर्व प्रथम रचना

गोदावत जैन गुरुकुल
छोटी सादड़ी (मेवाड़)

(धुन)

जिन-पति जिनवर जय जय वीर
भवसागर तारक महावीर ॥

सत्य ही जीवन तेरा है,
सत्य ही जीवन मेरा है।
सत्य के बिना अंधेरा है;
सत्य का ईश्वर चेरा है ॥

सत्य जगतीतल का श्रृंगार,
सत्य-बिन मनुज-जन्म बेकार ॥

११

भगवती अहिंसा

माता ! तूने उपजाये थे 'राम' 'कृष्ण' से पूत सपूत।
सत्यदेव की धर्म-सहचरी ! भेजे 'वीर' 'बुद्ध' से दूत॥
दानवता का मारा जब माँ ! जन-समाज अकुलाया था।
ईसु मुहम्मद दयानन्द से सब संकट बिसराया था॥
सब तीर्थंकर सब पैगम्बर तेरे दास कहाते हैं।
सब पुरुषोत्तम सभी सुधारक तेरे स्रोत बहाते हैं॥
जब अत्याचारों से जगको त्रस्त हुआ तूने देखा।
तब खेंची हम सब के उर मे सुखद शान्ति की स्मित रेखा॥
सत्यदेव से भी न जगत का कुछ भी कभी सुधारा हो।
करुणाशीले ! अगर न उनको तेरा पूर्ण सहारा हो॥
सत्यदेव के साथ अम्बिके ! निज दर्शन देते रहना।
सब विरोधियो के प्रहार को सीख जायंगे हम सहना॥
अन्यायों के मर्दन में जो सूक्ष्म रूप रहता तेरा।
उसे सदा समझाते रहना कायरता न करे डेरा॥
तेरा वेष बना करके जब कायरता छलने आवे।
तब तू असली रूप बताना राक्षसी न ठगने पावे॥
धर्म धर्म चिल्लाकर जो ठग स्वार्थ-साधना करते हैं।
दीनों की अबलाओं की आहों से जरा न डरते हैं॥
उनको सच्चा मार्ग सुझाने नवयुवकों मे शक्ति भरो।
'सूर्यभानु' बस यही विनय है त्रिभुवन मे घर घर विहरो॥

१२

भगवान से

अपना रूप बता दो ॥

ढूंढ़ा मथुरा ढूंढ़ी काशी,
पता न पड़ा कहां के वासी।
शिव सुन्दर अक्षय सुख राशी,
सत रहस्य समझादो। अपना० ॥१॥

वेद पुराण शास्त्र पढ़ २ कर
भी समझा न तुम्हें मूरख नर
अजर, अमर, सुख, कर, संकटहर,
अनुभव सुरस चखादो। अपना० ॥२॥

कोई कहत ब्रह्मा त्रिपुरारी,
हम कहते अरहन्त पुकारी।
कोई मुहम्मद बुद्ध मुरारी,
नाम मंत्र सिखलादो। अपना० ॥३॥

जब २ जैसे कष्ट पड़ेंगे,
अत्याचार असंख्य बढ़ेंगे।
होकर उनके विमुख लड़ेंगे;
यह भविष्य चमकादो। अपना० ॥४॥

दीनो के पालन में तुम हो,
दुष्टों के घालन में तुम हो।
अरु संचालन में तुम हो,
कह विवेक प्रकटादो। अपना० ॥५॥

पाप पुंज में पले हुए हैं,
माया से हम छले हुए हैं,
तृष्णा से हम जले हुए हैं।
चित की तपन बुझादो। अपना०॥६॥

स्वार्थ-वासना के भूखे हैं,
अरु स्वभाव के भी रूखे हैं।
तरुवर जीवन के सूखे हैं,
शांति स्नेह बरसादो। अपना०॥७॥

कर्मों का मारा मैं स्वामी,
अब तो तारो अंतर्यामी।
अविचल सुख का हूं मैं कामी,
सब आवरण हटादो। अपना० ॥८॥

तेरे दर पर खड़ा हुआ हू,
विषयों के वश पड़ा हुआ हू,
मोह गर्त मे गड़ा हुआ हूं,
ऊंचा नाथ उठादो। अपना०॥ ९ ॥

जिसके मन-मंदिर में आओ,
अंधकार अज्ञान हटाओ।
जग के सब सुख दुःख विसराओ,
निर्मल प्रेम बहादो। अपना० ॥१०॥
आओ मेरे प्यारे आओ,
मुझ पर तो अधिकार जमाओ।
हृत्तंत्री के तार बजाओ,
मन को मस्त बनादो। अपना०॥११॥
मैंने लाल रतन को पाया,
फिर क्यों कंकर हाथ उठाया।
निज का ही हां भान भुलाया,
अंतर शोर मचादो। अपना० ॥१२॥
भीलन को मोती न सुहावै,
मोती मूल्य नहीं घट जावे
उन्हें छोड़ चरखूं चुगलावै;
सच्ची परख करादो। अपना०॥ १३॥
दुर्जन सूरज पर थूकेंगे,
सारमेय गज पर भूंकेंगे।
वे समझो निश्चय चूकेंगे,
सीधा पाठ पढ़ादो। अपना०॥ १४॥

एक बार वह गाना गादो,
गगनागन में ध्वनि मंडरादो,
मीठी मीठी तान सुनादो,
गहरी नाद गुंजादो । अपना० ॥१५॥

जग में तो दुख ही दुख पाया,
सुख का नाम नजर नहीं आया।
इससे प्रभु का भजन बनाया,
सुन्दर साज सजादो। अपना० ॥१६॥

चाहे हो मति ठीक ढंग से,
करी प्रार्थना यह उमंग में।
छनी छनाई मधुर भंग में,
नीला रंग जमादो । अपना० ॥१७॥

'सूर्यभानु' है शरण तुम्हारी,
जन्म-मरण को दूर निवारी।
यही विनय जिनवर, अव धारी,
शिवपुर में पहुंचादो । अपना० ॥१८॥

१२

सत्य भक्त से

भगवान सत्य के भक्त वीर !
तन मन में भर साहस प्रचण्ड,
कन कन में भर कमनीय कांति;
जीवन में भर सौन्दर्य्य शान्ति ।
लवणोदधि में भर मधुर नीर, भगवान के सत्य के भक्त वीर॥१

भय-प्रद कतिपय अन्धे विचार,
अरु गतानुगति मय मूढ़ भ्रांति ।
क्षण में समूल हो जांय च्चार;
फैलाना ऐसी प्रबल क्रांति ।
पर रहना अति गम्भीर धीर । भगवान सत्य के भक्त वीर ॥२

तुमको समझूंगा राम कृष्ण,
ब्रह्मा, शंकर, धर्मावतार ।
ईसा मसीह, जरथुस्त, बुद्ध;
पैगम्बर पुरुषोत्तम उदार ।
तुमको मानूंगा महावीर । भगवान सत्य के भक्तवीर ॥३

तुम तेज पुंज तुम दिव्य ज्योति,
तुम प्रिय स्वदेश के रत्न लाल।
तुम स्वाभि मान की विमल मूर्ति;
तुम विश्व प्रेम के गृह विशाल।
तुम कुरूढ़ियों के लिये तीर। भगवान सत्य के भक्त वीर ॥४
कह लघु वय वर का है सुभाग,
नैच्चो पर करते अनाचार।
हा! बाल वृद्ध अनमेल व्याह;
अबलाओं पर भीषण प्रहार।
निर्गलित करना वैधव्य वीर। भगवान सत्य के भक्त वीर ॥५
इन पढे लिखों की सब विभूति,
जल बल करके होरही छार।
बेकार फिरे क्या करे हाय,
इनमें न कला कौशल प्रचार।
इन को बतलाना सुखद वीर। भगवान सत्य के भक्त वीर॥६
ये मुफ्त खोर अज्ञान बाल,
मुनि-साधु नाम धारी गंवार।
खाते औरों का व्यर्थ माल,
लोभी लम्पट पूरे लबार।
हटाना इनकी बुरी भीर। भगवान सत्य के भक्त वीर ॥७

है घर घर में डाकिनी फूट,
"तू तू मैं मैं हा! लूटमार ।
आपस आपस में भेद भाव;
हा ! कैसे संकीरण विचार ।
विहरा नवयुग की खरसमीर । भगवान सत्य के भक्त वीर ॥८

हैं बड़े बड़े ये धनी सेठ,
जिनकी सम्पति का नहीं पार ।
ओसर, मोसर, गंगोज, भोज;
ही में व्यय करते हैं असार ।
क्यों हैं लकीर के ये फ़कीर । भगवान सत्य के भक्त वीर ॥९

लो पकड़ एक कर में कृपाण,
उसकी करलेना तीक्ष्ण धार ।
फिर काट कुकर्मों का विषाण;
हिम्मत मत जाना बन्धु ! हार ।
है अचल धर्म की यही सीर । भगवान सत्य के भक्त वीर ॥१०

जीवन है समरस्थल महान,
होकर सतर्क करना विहार ।
है विजय लाभ अति कठिन काम;
पग पग पर रहना होशियार ।
यह 'सूर्य्य भानु' विनती अखीर । भगवान सत्य के भक्त वीर ॥११

१४
सत्य-सेवक से

सत्य के सेवक बढ़ते चल,
तेरे चरण चिन्ह शिव-सुख-मय ।
जीवन पर अंकित कर निर्भय,
विजय श्री पावेगा निश्चय ।
उर अम्बर में हो अरुणोदय ॥
निष्फल न खोना पल । सत्य के सेवक बढ़ते चल ॥१॥

बाधाएं चढ़ बढ़ कर आएं,
नूतन नूतन रंग बनाएं ।
क्यों हम दुर्बलता दिखलाएं;
उनकी शक्ति कुचलते जाएं ।
हो न कभी चंचल । सत्य के सेवक बढ़ते चल ॥२॥

सत्य ही है तेरा आधार,
इसी से होगा बेड़ा पार ।
विरोधी दल का हाहाकार,
समझना तू अपना सत्कार ॥
प्रण से तनिक न टल । सत्य के सेवक बढ़ते चल ॥३॥

आखिर एक समय आवेगा,
पूर्ण सफलता तू पावेगा ।
सब के संकट बिसरावेगा;
जग तेरी महिमा गावेगा ।
अतुल मिलेगा बल । सत्य के सेवक बढ़ते चल ॥४॥
सिद्ध, बुद्ध, जरथुस्त, राम को,
गुरु गोविन्द जिनन्द श्याम को ।
महमद पैग़म्बर इस्लाम को;
ईसा के पावन पैग़ाम को ।
करना खूब अमल । सत्य के सेवक बढते चल ॥५॥
दंभ अहंत्व न लाना प्यारे,
इन्हें सर्वथा रखना न्यारे ।
जीवन के हैं शत्रु हमारे;
नष्ट करेंगे प्रयत्न सारे ।
"सूरजभानु" संभल । सत्य के सेवक बढ़ते चल ॥६॥

१५

कवि से

कवि, गाना गादे.

अनल शोर मच जाय गगन मे गहरी नाद गुंजा दे।

कवि, गाना गादे ॥ ध्रुव ॥

काप उठे सहसा वन उपवन,

तरुवर गिरि-गह्वर, अंवर-धन।

सविता सर वर ग्रह उपग्रह गन,

उछले सागर का चंचल मन,

ऐसी क्रांति मचादे, कवि, गाना गादे ॥ १ ॥

मिटे जगत की दुखित दीनता,

मनुज जाति की पराधीनता।

आपस की सव मन-मलीनता,

विभव-जन्म अनुराग हीनता।

मधुरी तान सुनादे, कवि, गाना गादे ॥ २ ॥

अरुणोदय की किरण २ पर,

उदधि ऊर्मि पर अनुज गण पर,

द्युति पर छिति पर रज कण२ पर।

क्षण के अणु २ पर तृण २ पर।

अपनी ध्वनि पहुंचादे, कवि, गाना गादे ॥ ३ ॥

विघ्न छिन्न हों वसुधा भर में,
विपुल शांति हो नगर नगर में।
प्रचुर प्रेम प्रकटे घर २ में,
जीवन के सूखे सरवर में,
निर्मल श्रोत बहा दे, कवि, गाना गादे ॥ ४ ॥

विहग राग में राग मिलावें,
सरिता सर २ शब्द सुनावें।
स्वर से नभ जल थल भर जावे,
सुरनर मुनि सुध बुध बिसरावें।
मोहन मन्त्र चलादे, कवि, गाना गादे ॥ ५ ॥

कभी न सपझें प्रेम भंग में,
बहें स्नेह की जल तरंग में।
संग २ में एक रंग में,
'सूर्यभानु' अपनी उमंग में।
सब को ढंग बनादे, कवि, गाना गादे ॥ ६ ॥

१६

अर्हन्त शरण

अनवरत अवलम्बन अभिराम,
अवस्थिति शून्य हृदय-विश्राम।
अनुपम अमित सौख्य का धाम;
अहा! अर्हन! तेरा शुभ नाम॥

१७

सिद्ध-शरण

निरंजन, निर्विकार, निष्काम,
आत्म-रत 'सूर्यभानु' वसु-याम।
धवल तव यश सुविलसित ललाम;
सिद्ध भगवन! स्वीकार प्रणाम॥

१८

साधु-शरण

मात, पिता, सुत, बन्धु' सहोदर,
स्वार्थ बिना कुछ काम न आवें,
स्वार्थ बने तब तो यह 'सूरजभान'
सदा सब के मन भावें।
धन्य सु साधु सदा बिन स्वारथ के,
प्रभु के पद पै पहुंचावें।
स्वारथ औ परमारथ में;
शरणागत के दुख दूर भगावें॥

१९

वीतराग-धर्म-शरण

श्री जिन भाषित धर्म ही,
सकल सुखों का सार।
'सूर्य्यभानु' सब छोड़ कै,
पकड़ एक आधार॥